चन्दामामा
जून १९७६
1 रु

"आपने कहा था कि ये बड़ी आसानी से साफ किये जा सकते हैं!"
सोमानी-पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स आसानी से साफ किये जा सकते हैं तथा सम्पूर्ण स्वास्थ्य-सम्मत होते हैं। तरह तरह के डिजाइनों, फीके न पड़ने वाले रंगों—जगमगाते सफेद समेत में मिलते हैं। शानदार ऐसे कि देख कर जी खुश हो जाय। हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड द्वारा निर्मित सैनिटरीवेयर तथा सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड द्वारा बने सोमा मेटल फिटिंग्स का बड़ी खूबसूरती के साथ सोमानी पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स से मेल बैठ जाता है।
सोमानी-पिल्किंगटन्स् लिमिटेड
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड
खूबसूरत स्नानगृह का प्रतीक
२, रेड क्रास प्लेस, कलकत्ता-७०००१
सचित्र रंगीन पुस्तिका— 'ए गाइड टू ब्यूटिफुल बाथरूम्स' के लिए लिखिये और अपने प्रयोजन के अनुसार अपना स्नानगृह सजा लीजिये।
naa. SPL-7524 HIN

पारले पॉपिन्स

फलों के स्वादवाली गोलियां

५ फलों के स्वाद—
रासबेरी, अनानास,
नींबू, नारंगी व मोसंबी.

everest/393/PP-hn

List of Prize Winners of Chandamama-Cablin Colouring Contest No. 1

1st Prize : Nirmal Nambisan, Calcutta. *2nd Prize* : Dinesh Jain, Delhi. *3rd Prize* : Indu Verma, Bhopal. *Consolation Prizes* : Sukant Gupta, Ambala Cantt. Rajeshkumar Babbar, Munshia. Kiran Gupta, Kanpur. Majahar Hussain, Bombay. Surendra Kumar Dogra, New Delhi. *Merit Certificates* : Sunil Aswani, New Delhi. Hemant Pathak, New Delhi. Mohini Devi, Samaria. Swati Nandkumar Karnik, Bombay. Pritpal Singh Sethi, Delhi. Bindukumar, Bombay. Jairaj Nair, Calcutta. Ranjan Pal Singh, Roorki. Sanjay Awasthi, New Delhi. Ravi Kumar, New Delhi.

चन्दामामा
संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी
वे ही समाज सदा-सर्वदा उन्नति कर सकते हैं जो परोपकार करते हों और दुर्बलों को सहयोग देते हों! वरना बलवान तथा दुर्बलों के बीच समाज बंट जाता है। लेकिन समाज का उद्धार करनेवालों के रूप में अभिनय करते हुए अपने द्वारा किसी का हित होने से रोकने का प्रयास करनेवाले लोग समाज के शत्रु होते हैं। यह नीति हमें "दुनिया का रवैया" नामक कहानी के द्वारा भली भांति विदित होती है।
वर्ष : २८ जून १९७६ अंक : १०
CHANDAMAMA PUBLICATION

मित्र-संप्राप्ति

[३५]

हिरण्यक ने लघुपतनक से कहा–"हम दोनों में मैत्री संभव नहीं है।" इस पर लघुपतनक (कौए) ने यों बताया–"तुमने चित्रग्रीव तथा उसके अनुचरों को जाल से मुक्त किया, इस पर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। इसीलिए मैं तुम्हारी मैत्री चाहता हूँ।"

"तुम खानेवाले हो और मैं आहार हूँ, इसलिए हम दोनों के बीच मैत्री कैसे हो सकती है? मैत्री तथा शत्रुता के लिए भी जन्म तथा संपदा में समानता होनी चाहिए, लेकिन यदि एक धनी और दूसरा दुर्बल हो, तो मैत्री संभव नहीं है! इसलिए तुम तुरंत यहाँ से चले जाओ।" हिरण्यक (चूहे) ने जवाब दिया।

"अगर तुम सुरंग में से बाहर न आओगे तो मैं तुम्हारे सुरंग द्वार के पास अनशन करके अपने प्राण त्याग दूंगा। इसका पाप तुम्हारे सिर लगेगा।" लघुपतनक ने चुनौती दी।

"तुम्हारी बातें कैसी अस्वाभाविक हैं? मैं अपने सहज शत्रु के साथ कैसे मैत्री कर सकता हूँ? बुजुर्गों की बातें क्या तुमने नहीं सुनीं कि शत्रु गिड़गिड़ावे या मिन्नत भी करे तो, चाहे समान भाव भी क्यों न रखते हो, उस के साथ मैत्री नहीं करनी चाहिए! आखिर गरम जल भी गुण की साम्यता रखते हुए आग को बुझा देता है न?" हिरण्यक ने समझाया।

"तुम्हारी बातें भी सहज कैसे कही जा सकती हैं? तुमने मेरा चेहरा तक देखे बिना मुझे अपना सहज शत्रु कैसे माना?" लघुपतनक ने पूछा।

"शत्रु दो प्रकार के होते हैं! कुछ लोग जाति के शत्रु होते हैं, कुछ लोग अनेक

अंतिम पृष्ठ का चित्र

कारणों से शत्रु बन जाते हैं। तुम मेरी जाति के शत्रु हो! जीवन निर्वाह के कार्यों में किन्हीं कारणों से यदि शत्रुता पैदा होती है तो उसे होशियारी के साथ हल किया जा सकता है। परंतु जाति की शत्रुता किसी एक की मृत्यु से ही अंत हो जाती है!" हिरण्यक ने कहा।

"कृपया मुझे यह बताओ कि इन दो प्रकार की शत्रुता के बीच के अंतर को कैसे जाना जा सकता है?" कौए ने पूछा।

इस पर चूहे ने यों उत्तर दिया:

"संपर्क के कारण जो शत्रुता पैदा होती है, उसके कोई न कोई विशेष कारण होता है! उस कारण को दूर करे तो शत्रुता भी मिट जाती है! नेवला तथा सांप, शाकाहारी तथा मांसाहारी जानवर, जल और अग्नि, धनी और दरिद्र, सिंह तथा हाथी, शिकारी और हिरण, दार्शनिक और नास्तिक, विवेकशील तथा मूर्ख, शीलवती तथा दुराचारिणी, आदर्श व्यक्ति तथा दुष्ट, देवता और राक्षस–इनके बीच स्वाभाविक शत्रुता होती है। इनमें से कोई भी वर्ग दूसरे वर्ग का संपूर्ण विनाश नहीं कर सकता। मगर उनके बीच सदा संघर्ष चलता ही रहता है! एक वर्ग के मन में यह व्यथा है कि वह दूसरे वर्ग को मिटा न पाया। ऐसी शत्रुता का कोई हल नहीं है।"

"ऐसी शत्रुता अनर्थकारी है। विवेकशील व्यक्ति को चाहिए कि नये मित्रों का संपादन करे, उन्हें तो पुरानी शत्रुता को बढ़ाना नहीं चाहिए! इसलिए तुम मेरे साथ मैत्री करके इसके परिणाम की परीक्षा लो।" कौए ने समझाया।

इस पर चूहे ने यों जवाब दिया:

"हो सकता है कि तुम उत्तम स्वभाव के हो! मेरा अहित करने की कामना तुम न रखते हो, फिर भी हमारी मैत्री के द्वारा कोई हित नहीं होता। अंत में प्रकृति का स्वभाव ही विजयी होगा। तुम कह सकते हो कि तुम्हारा स्वभाव उत्तम है, इसलिए किसी की भी शत्रुता मेरी हानि नहीं कर

सकती। मगर पाणिनी नामक एक वैयाकरण को एक सिंह ने मार डाला है। जैमिनी नामक एक दार्शनिक को एक हाथी ने यूं ही मार डाला। पिंगल नामक एक वेद पंडित को मगर-मच्छ ने निगल डाला।"

कौए ने इसके उत्तर में कहा–"तुम्हारा कहना सत्य है! मगर मेरी भी बातों को सुनो! मैत्रीभाव तो मनुष्यों के बीच परस्पर सहयोग के द्वारा पैदा होता है। उत्तम लोगों के बीच प्रथम संदर्शन में ही मैत्रीभाव पैदा होता है। मैं अत्यंत उत्तम प्रकृति का हूं, मैं तुम्हें वचन देता हूं कि तुम्हारा कभी अहित न करूंगा।"

"तुम्हारे वचन पर मेरा कोई विश्वास नहीं है। शत्रु के वचनों पर विश्वास नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति शत्रुओं पर विश्वास नहीं करता उसे देवता भी मार नहीं सकते। इन्द्र ने दिति के गर्भ में छिद्र बनाया। क्यों कि दिति ने उस पर विश्वास किया। इसलिए शत्रु पर कभी भी विश्वास नहीं करना चाहिए। बलवान व्यक्ति भी विश्वास करने के कारण दुर्बलों के हाथों में विनाश को प्राप्त होते हैं।" चूहे ने समझाया।

ये बातें सुन कौआ थोड़ी देर तक स्तब्ध रह गया। वह सोचने लगा–'यह चूहा कैसी नीति जानता है! इसके साथ मैत्री करने की कामना मेरे भीतर बढ़ती जा रही है, घटती नहीं।"

अंत में वह बोला–"हे हिरण्यक! कहा जाता है कि सात क़दम मिलाकर चलने से दो व्यक्ति मित्र हो जाते हैं। इस सुदीर्घ वार्तालाप के द्वारा तुम अप्रयत्न ही मेरे मित्र बन गये हो! इस प्रकार हम प्रति दिन यों वार्तालाप कर सकते हैं न?"

कौए की बुद्धिमत्ता तथा उसकी बातों की सचाई को भांपकर चूहा बोला–"ऐसा कर सकते हैं, लेकिन तुम्हें कभी भी मेरे सुरंग में प्रवेश नहीं करना चाहिए।"

इस शर्त को कौए ने मान लिया।

माया सरोवर

[५]

[जयशील ने बाघों के मुँह में जाने से सेनापति के पुत्र मंगलवर्मा की रक्षा की। राजा कनकाक्ष ने उसकी प्रशंसा की और मंत्री की सलाह पर उसे दरबार में नौकरी दी। मंत्री जब जयशील को किसी राज कार्य पर भेजने के संबंध में समझा रहा था, तभी एक सेवक एक टूटी तलवार तथा मोतियों की माला को लेकर वहाँ पहुँचा। बाद...]

राजा कनकाक्ष तथा मंत्री धर्ममित्र सेवक के द्वारा लाई गई तलवार और मोतियों की माला को देख आश्चर्य में आ गये। मंत्री ने माला की जांच करके पूछा—"महाराज! क्या यह माला युवरानी की हो सकती है? इसी प्रकार वह टूटी तलवार युवराजा की तो नहीं?"

राजा ने माला तथा तलवार को बार-बार उलट-पलटकर देखा, तब कहा—"यदि यह बात कही न गई होती कि ये चीजें जंगल में उस जगह प्राप्त हुई हैं जिस पेड़ के यहाँ से युवराजा और युवरानी गायब हो गये हैं, तो मेरे भी मन में यह संदेह कदापि पैदा न होता कि ये चीजें उन्हीं की हो सकती हैं।"

"महाराज! आप का कहना सही है, पर इन चीजों से भली भांति परिचित लोगों को बुलवाकर सही निर्णय लेना

होगा। युवरानी की प्रधान सखी मल्लिका को बुलवायेंगे तो वह तलवार को भले ही पहचान न पावे, परंतु मोतियों की माला को पहचान सकती है!" मंत्री धर्ममित्र ने सुझाया।

राजा के आदेश पर एक सेवक मल्लिका को बुला लाया। मल्लिका अपनी मालिकिन के गायब हो जाने पर बहुत दुखी थी। राजा ने उस माला के प्राप्त होने का समाचार न देकर केवल माला उसके हाथ में दे दी और कहा-"अंतःपुर की नारियों में से किसी ने यह माला खो दी है, इसे तुम ले जाकर उसी नारी को दो, जो इसे खो चुकी है।"

मल्लिका ने माला के प्रत्येक मोती को टटोलकर देखा, एक स्थान पर रुककर चिल्लाकर बोली-"महाराज! यह माला निश्चय ही युवरानी की है! जब हम लोग जंगल में विहार करने गई थीं, तब युवरानी इस माला को धारण किये हुए थीं। यह बात मुझे अच्छी तरह से याद है।"

मल्लिका ने जब यह बात स्पष्ट कर दी कि वह माला युवरानी की है, तब राजा कनकाक्ष का दिल कचोट उठा। वह मल्लिका से कुछ पूछने को हुआ, पर उसके मुंह से बोल न फूटे, वह सर झुकाये मौन रह गया। उसके मुंह पर चिंता की गहरी रेखाएँ खिंच गईं।

राजा की हालत को भाँपकर मंत्री धर्ममित्र मल्लिका से बोला-"मल्लिका, ऐसी मालाएँ संपन्न परिवार की नारियाँ अकसर पहना करती हैं, ऐसी हालत में तुम यह कैसे कह सकती हो कि यह माला निश्चय ही युवरानी की है? इसका तुम कोई सबूत दे सकती हो? केवल अनुमान लगाने से हमारा कार्य सफल होनेवाला नहीं है। हमें सही समाचार मिलना चाहिए, जिससे कि हम आगे की कारवाई कर सकें।"

मल्लिका मंत्री के निकट आई, माला के मोतियों की ओर उनका ध्यान आकृष्ट

करते हुए बोली–"आप इन दो टूटे मोतियों को देख लीजिए। एक बार युवरानी मुझ पर न मालूम क्यों नाराज़ हो गई और उस समय उन्होंने गुस्से में आकर यह माला मुझ पर फेंक दी, लेकिन निशाना चूकने के कारण वह माला निकट के एक पेड़ के तने मे जा लगी, तब माला के ये दो मोती टूट गये थे। हमने सोचा था कि दरबारी स्वर्णकार से इन टूटे मोतियों की जगह नये मोती जड़वा दिये जाय! ओह! मेरी प्यारी राजकुमारी!" इन शब्दों के साथ वह जोर से रो पड़ी।

मल्लिका का जवाब सुनने पर राजा तथा मंत्री के मन में यह विश्वास जम गया कि यह माला निश्चय ही युवरानी कांचनमाला की ही है! इसके उपरांत किसी के मन में यह संदेह न रह गया कि टूटी तलवार युवराजा कांचनवर्मा की ही है! मगर तलवार टूट गई थी, इस बात को लेकर राजा तथा मंत्री के मन में आश्चर्य पैदा हुआ। राजा कनकाक्ष ने तलवार जयशील के हाथ देते हुए पूछा–"जयशील! इस तलवार के टूटने का क्या कारण हो सकता है? इसकी तुम अच्छी तरह से जांच करके बताओ।"

जयशील ने तलवार की थोड़ी देर तक जांच की और कहा–"महाराज! युवराज ने उस शत्रु के साथ युद्ध किया होगा जो उन्हें बन्दी बनाने गया था! मगर तलवार शत्रु से लगकर टूटी हुई नहीं है, किसी शिला अथवा पेड़ के तने से टकराकर टूट गई होगी।"

"यदि ऐसी बात हो तो तलवार का दूसरा टुकड़ा उसी प्रदेश में प्राप्त हुआ होता न? ये चीज़ें लानेवाले बहेलिये की बात क्या होगी?" इन शब्दों के साथ मंत्री धर्ममित्र ने तलवार और माला को जंगल से लानेवाले सेवक की ओर प्रश्न भरी दृष्टि प्रसारित की।

सेवक ने आगे बढ़कर मंत्री से कहा–"महानुभाव! वह बहेलिया हमारे सवालों

का सही उत्तर देने की हालत में नहीं है। वह पागल की भांति डरी व सहमी हुई दृष्टि प्रसारित करते हुए बार-बार "दो पैरोंवाला मगर मच्छ" कहकर चिल्ला रहा है! उसके रिश्तेदार यह सोचकर कि उसमें भूत-प्रेत का प्रवेश हो गया है, ओझा से इलाज करा रहे हैं। मैं यह सोचकर यह तलवार और माला यहाँ ले आया हूँ कि शायद ये चीजें युवराजा और युवरानी की हों!"

यह जवाब सुनकर सिद्ध साधक चौंक उठा और बोला-"महाराज! महाकाल के परिवार के कुछ पिशाच जब-तब विभिन्न प्रकार के वेशों में लोगों को दिखाई देते हैं; यह बात तो सर्वविदित ही है। मैं उस बहेलिये के शरीर से भूत को भगाकर उसके मुंह से ये बातें कहलवा दूंगा कि उसे ये चीजें कैसे प्राप्त हुईं? इसलिए मुझे तथा जयशील को वहाँ पर जाने की अनुमति दिला दीजिए!"

मंत्री धर्ममित्र के मन में यह संदेह पैदा हुआ कि युवराजा तथा युवरानी के अपहरण और बहेलिये के मति-भ्रमण में शायद कोई संबंध हो! राजा कनकाक्ष के मन में भी इसी प्रकार की शंका हुई। वे परस्पर इस बात पर तर्क-वितर्क कर ही रहे थे कि तभी जयशील ने कहा-"महाराज! युवराजा तथा युवरानी जिस पेड़ के यहाँ से गायब हुए, वहीं पर एक बहेलिये को ये चीजें मिल गई हैं, मैं समझता हूँ कि उसे किसी ने डरा-धमकाकर पागल बना दिया होगा! इसलिए हम वहाँ पर पहुँचकर असली बात का पता लगायेंगे, यही उचित होगा।"

राजा तथा मंत्री ने अपनी सम्मति दी। दूसरे ही क्षण जयशील और सिद्ध साधक राज सेवकों के द्वारा लाये गये घोड़ों पर सवार हो चल पड़े। जंगल से आया हुआ सेवक आगे रहकर उन्हें जंगल का सही रास्ता दिखाता गया। इस प्रकार वे तीनों घोड़ों पर घंटा भर यात्रा करके

जंगल के एक वट वृक्ष के निकट पहुंचे। उसके निकट बड़े-बड़े वृक्ष, झाड़ियां और थोड़ी दूर पर एक बड़ा पर्वत भी था।

वट वृक्ष के नीचे दस-बारह बहेलिये जमा थे। बीच में पागल बहेलिये को रस्सियों से बाँधकर रखा गया था। एक ओझा जैसा व्यक्ति धूप देते, एक हाथ में ठेढ़ी लाठी तथा दूसरे हाथ में नीम की टहनियाँ ले उछल-कूद करते जोर-जोर से चिल्ला रहा था–"ह्राम्, हठ हठ, फट् फट्! ह्लीम!"

जयशील और सिद्ध साधक वृक्ष से थोड़ी दूर पर ही घोड़ों पर से उतर पड़े और बरगद के नीचे चले गये। सिद्ध साधक ने सिर हिलाते चिल्लानेवाले ओझा की ओर दृष्टि प्रसारित की, अपने हाथ की लोहे की टोपवाली लाठी उठाकर चिल्ला पड़ा–"ठहर जाओ!"

ओझा ने साधक की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखा, दाँत मींचते उस पर आक्रमण करने को हुआ, तभी राजसेवक ने उसे रोककर कहा–"अरे कमबख्त ओझा! इन्हें तुम समझते ही क्या हो? ये तो राज दरबार के मांत्रिक हैं।"

सेवक के मुँह से ये बातें सुन ओझा घबरा गया और सिद्ध साधक की ओर डरी व सहमी हुई नज़र दौड़ाने लगा। साधक ने अपनी आँखें लाल करके एक क़दम आगे बढ़ाकर ओझा को धमकी दी–

अब तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं, उठ खड़े हो जाओ!"

बहेलिये की समझ में वे बातें ठीक से न आईं। उसने भौंहें तानकर साधक की ओर आश्चर्य पूर्वक देखा, पर इकट्ठे हुए लोगों में से एक ने, जो उसका रिश्तेदार था, कहा–"महाशय! इसका नाम भीमदास नहीं, रामदास है!"

"चाहे जो भी दास हो, पर वह इस क्षण से भीमदास ही है! मेरे मुंह से जो शब्द एक बार निकल पड़ते हैं वे पत्थर की लकीर हैं। जयशील! तुमने मगर मच्छ की छाती में जो तलवार घुसेड़ दी, उस समय तलवार में जो खून लग गया था, जरा भीमदास को तो दिखाओ।" इन शब्दों के साथ उसने जयशील की तलवार को स्वयं म्यान से बाहर निकाली और तलवार की नोक पर अपने भाल पर अंकित कुंकुम निकालकर झट से लगा दिया।

"अरे दुष्ट ग्रहों के उपासक! तुम मुझे समझते हो क्या हो? मैं चाहूँ तो अपने मंत्र के बल पर अभी तुमको एक तिनके के रूप में बदलकर अपनी छिगुनी में लपेट सकता हूँ!"

ओझा सिद्ध साधक के पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगा–"महाराज! मुझसे गलती हो गई! माफ़ कर दो।" साधक ने उसे अपने पैर से ठोकर मार दी और बाल नोचते पागल की तरह चारों ओर नज़र दौड़ानेवाले बहेलिये के पास गया और बोला–"अरे भीमदास! तुमको डरानेवाले दो पैरवाले मगर मच्छ को इस वीर युवक जयशील ने तलवार के घाट उतरा है!

बहेलिया पल भर उस तलवार की ओर एकटक देखता रहा। चट से खड़े होकर बोला–"सरकार! उस दो पैरवाले मगर-मच्छ को आप ने मार डाला? उसकी लाश कहाँ पर है?"

जयशील थोड़ी दूर पर खड़े यह सारा नाटक देख रहा था। उसके मन में यह शंका पैदा हुई कि सिद्ध साधक अपनी

अक़्लमंदी का परिचय देने जाकर आफ़त में फंस जाएगा। यदि बहेलिये समझ गये कि साधक की सारी बातें झूठी हैं तो वे क्रोध में आकर सामना कर सकते हैं, ऐसी हालत में उसे खुद अपनी तलवार का उपयोग करना पड़ेगा।

जयशील यों सोच ही रहा था, सिद्ध साधक जरा भी विचलित हुए बिना बहेलिये से बोला–"अरे, इस दुनिया का यह तरीका है कि मनुष्य के मरने पर उसका मृत शरीर शव बन जाता है। कहीं पिशाच के मरने पर शव बन जाता है? मैंने उस मगर मच्छवाले पिशाच को अपने मंत्र के बल जलाकर भस्म बनाया और उसे अपने शरीर पर मल दिया है। अब तुम्हें डरने की कोई जरूरत नहीं। यह बताओ कि मोतियों की माला और टूटी तलवार तुम्हें कहाँ पर मिलीं? और उस मगर मच्छवाले पिशाच ने तुमसे क्या क्या बताया है?"

बहेलिया अब तक भय के प्रभाव से मुक्त न हुआ था। उसने पास में ही खड़े अपने रिश्तेदारों की ओर तथा ओझा की तरफ़ भी देखकर साधक से कहा–"सरकार! लगता है कि माला तथा तलवार को दो पैरोंवाले मगरमच्छ पिशाच उठा ले गया होगा!"

इस पर राजा का सेवक बहेलिये से बोला–"अरे कमबख्त! वे दोनों चीजें ले जाकर मैंने खुद राजा के हाथ सौंप दी है। मैं जब उन्हें ले जा रहा था, तब तुम पागल की तरह चिल्लाते ज़मीन पर लोट रहे थे, लेकिन यह बात तुम नहीं जानते। चाहे तो अपने रिश्तेदारों से पूछ लो?"

बहेलियों में से एक ने चिल्लाकर कहा–"अबे रामदास! राजा के कर्मचारी का कहना सत्य है!"

यह उत्तर सुनकर बहेलिया संतुष्ट हुआ और सिद्ध साधक से बोला–"सरकार! जटाओंवाला यह बरगद पिशाचों का अड्डा है। राजा के बच्चे जब इधर से निकले,

तब ये ही पिशाच उन्हें उठाकर ले गये होंगे।"

ये शब्द सुनकर जयशील खीझ उठा, अपना सिर हिलाकर साधक से बोला–"साधक, अनावश्यक देरी क्यों करते हो? हम इसलिए यहाँ पर आये हैं कि युवराजा तथा युवरानी का अपहरण करनेवाले लोगों का पता लगावे, यह बात तुम जल्दी जान लो, समझे!"

"अरे भीमदास! यह तलवार और माला तुम्हें कहाँ मिलीं? मगरमच्छवाला वह पिशाच तुम्हें कहाँ दिखाई पड़ा? उस संबंधी पूरे विवरण बता दो!" सिद्ध साधक ने पूछा।

बहेलिये ने एक बार अपना गला संवारकर कहा–"सरकार! आज सवेरे मैं धनुष और बाण लेकर शिकार खेलने चल पड़ा। मुझे उस सामनेवाले साल वृक्ष की डालों में से जंगली मुर्गे की बांग सुनाई दी। मैंने दबे पाँव चलकर उस पर बाण चलाया। लेकिन बाण उसके पंख में जा लगा। मुर्गा चिल्लाकर ऊपर उड़ा, बाण के रोकने के कारण वह उड़ न पाया और उस झाड़ी में जा गिरा।"

जयशील ने बहेलिये की बातों को काटते हुए कहा–"उस झाड़ी को तो दिखाओ, यहाँ पर तो कई कांटोंवाली झाड़ियां हैं!"

इसके बाद बहेलिया जयशील तथा सिद्ध साधक को एक घनी कंटीली झाड़ी के पास ले गया। तब जयशील ने उससे पूछा–"क्या तुम्हें इसी झाड़ी में मोतियों की माला और टूटी हुई तलवार मिल गई?"

"जी हाँ सरकार!" बहेलिये ने उत्तर दिया।

बहेलिये की बात पूरी होने के पहले ही सिद्ध साधक ने झुककर झाड़ी में देखना बंद किया और उछलकर बोला–"जयशील! महारण्य के बीच कंटीली झाड़ी में प्राचीन ताड़ पत्रोंवाला ग्रंथ है! जय महाकाल की!" इन शब्दों के साथ साधक झाड़ी में से एक छोटा सा ताड़ पत्रों का बण्डल निकाल लाया। (और है)

वर का चुनाव

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, हो सकता है कि आप का आशय महत्वपूर्ण हो, पर कभी कभी वे बड़े-बड़े आशय सफल नहीं होते, बल्कि कठिनाइयों में भी डाल देते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप में तुम्हें सुवर्णकुमारी के विवाह का वृत्तांत सुनाता हूं, श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में चन्द्रगिरि पर राजा रविवर्मा शासन करता था। उसके इकलौती कन्या सुवर्णकुमारी थी। राजा रविवर्मा ने उस कन्या को अपने पुत्र के समान मानकर उसे समस्त प्रकार की युद्ध-विद्याएँ सिखलाईं। सुवर्णकुमारी की प्रज्ञा अनुपम थी। वह

बेताल कथाएँ

धनुर्विद्या तथा खड्ग विद्या में सब से प्रथम निकली। अपनी छोटी आयु में ही अपने पिता के साथ जाकर दो तीन बार युद्धों में भाग लिया और अपनी असाधारण शक्ति एवं साहस का परिचय दे पिता को विजय दिलाई। युद्ध क्षेत्र में वह अति भयंकर प्रतीत होती, पर सुंदरता में अप्सराओं का स्मरण दिलाती थी।

सुवर्ण कुमारी विवाह के योग्य हो गई थी। राजा रविवर्मा का विचार था कि अपनी पुत्री के योग्य वीर के साथ उसका विवाह किया जाय, इसी विचार से उसने आस-पास के सभी देशों में ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो वीर युद्ध विद्याओं में राजकुमारी को पराजित करेगा उसी के साथ उसका विवाह किया जायगा और अमुक दिन प्रतियोगिता होगी।

वास्तव में राजकुमारी के साथ विवाह करने के लिए अनेक राजकुमार तैयार थे। फिर भी प्रतियोगिता के दिन तक एक भी राजकुमार आगे न आया। मगर इस स्वयंवर को देखने के लिए कई देशों के लोग दल बांधकर आ उपस्थित हुए।

राजकुमारी स्पर्धा के लिए तैयार हो उपस्थित हुई। मगर अनेक राजकुमारों में से एक भी आगे नहीं आया। इसे देख सब लोग विस्मय में आ गये। तभी एक जंगली युवक ने आगे बढ़कर राजा रविवर्मा से कहा–"महाराज, मैं युवरानी के साथ स्पर्धा में भाग लूंगा। आप ही आदेश

दीजिए कि मैं किस विद्या में उनके साथ प्रतियोगिता में भाग लूं?" वास्तव में वह जंगली युवक के वेष में स्थित प्रसन्न देश का युवराजा सुधीर था।

युवरानी सुवर्णकुमारी ने उस युवक से कहा–"मैं जिस धनुर्विद्या का प्रदर्शन करूँगी, उसे तुम भी प्रदर्शित कर सकते हो!" इन शब्दों के साथ धनुष हाथ में लेकर उसने एक के बाद एक बाण आसमान में छोड़ दिया। थोड़ी ही देर में वे बाण एक से एक जुड़कर नीचे आ गिरे।

राजकुमारी ने अपने धनुष और बाण सुधीर के हाथ में दिये। उसने एक के पीछे एक क्रमशः तीन बाण आसमान में छोड़ दिये। वे तीनों एक से एक जुड़कर एक लंबे बाण की भाँति नीचे आ गिरे। लोगों के हर्षनाद से आसमान गूंज उठा।

इसके बाद खड्ग युद्ध की प्रतियोगिता हुई। सुवर्णकुमारी ने दोनों हाथों में दो खड्ग लिये, सुधीर के हाथ भी दो खड्ग दिये गये। दोनों के बीच खड्ग युद्ध प्रारंभ हुआ, तभी सुधीर के हाथ का खड्ग उड़ गया, दूसरे क्षण सुधीर ने सुवर्णकुमारी के हाथों में स्थित दोनों खड्गों को उड़ाया और अपने खड्ग को पृथ्वी पर गाड़ दिया।

राजा रविवर्मा इस बात पर बड़ा प्रसन्न हुआ कि अपनी पुत्री को पराजित कर सकनेवाला दामाद उसे प्राप्त हुआ है। उसने सुधीर से कहा–"मैंने जो घोषणा

साथ वह जिस हाथी पर सवार हो आया था, उसी पर वापस लौट गया।

इसे देख राजा रविवर्मा अत्यंत निराश हुआ। उसने जो परीक्षा ली, वह सफल तो हुई, पर उसका फल उसे नहीं मिला। सुवर्णकुमारी का विवाह रुक गया। इसके बाद राजा ने अपनी पसंद के कुछ राजकुमारों के पास यह संदेशा भेजा कि वे उसकी पुत्री के साथ विवाह करें। मगर प्रायः सब ने कोई न कोई बहाना कर उसकी इच्छा का तिरस्कार किया, इससे राजा रविवर्मा और हताश हो गया।

थोड़े दिन बाद प्रसन्न देश का राजकुमार सुधीर ने स्वयं राजकुमारी के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट करते हुए संदेशा भेजा। यह समाचार मिलने पर राजा रविवर्मा की चिंता जाती रही। उसने सुधीर के साथ अपनी पुत्री का विवाह वैभवपूर्वक संपन्न किया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन्, मेरे मन में अनेक संदेह हैं। सुधीर अपने निजी वेष में न आकर जंगली युवक के रूप में राजकुमारी के साथ स्पर्धा करने आया, इसका क्या कारण है? क्या एक नारी के हाथों में हार जाने का उसे डर था? या यह जांचने के लिए कि राजकुमारी को पराजित करने

की है, उसके अनुसार मैं अपनी पुत्री का विवाह तुम्हारे साथ करूँगा। मेरे अनंतर तुम इस देश पर शासन करो।"

इसके उत्तर में सुधीर ने कहा–"राजन्, मैं राजकुमारी के साथ विवाह करने के ख्याल से नहीं आया हूँ। उन्हें पराजित करने आया हूँ। मेरा यह नियम नहीं है कि पराजित राजकुमारी के साथ ही मैं विवाह करूँगा। मैंने यह भी कभी नहीं सोचा कि आसमान में निशाना लगाकर बाणों का प्रयोग करने वाला व्यक्ति ठीक से शासन कर सकता है। जंगल में निवास करने वालों के लिए राज्य तथा राजकुमारियाँ किसलिए?" इन शब्दों के

वाला व्यक्ति चाहे जो भी हो, उसके साथ वह शादी करने के लिए तैयार हो जायगी या नहीं? उसके अतिरिक्त किसी. और राजकुमार के प्रतियोगिता में भाग न लेने का कारण क्या है? प्रतियोगिता में विजयी होने के पश्चात भी सुधीर ने राजकुमारी के साथ विवाह करने से क्यों तिरस्कार किया? क्या वह उसके सौंदर्य से अप्रसन्न था? ऐसी हालत में बाद को उसीने स्वयं राजकुमारी के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट करते हुए राजा रविवर्मा के पास संदेश क्यों भेजा? इन सभी संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा!"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "इन सब का मूल कारण रविवर्मा ने अपनी कन्या के स्वयंवर के हेतु प्रतियोगिता का जो प्रबंध किया, वही है! इस प्रतियोगिता के पीछे जो अविवेक शीलता छिपी थी, उसे सुधीर ने स्पष्ट किया। स्वयंवर में भाग लेनेवाले व्यक्ति पराजय से कभी नहीं डरते। रविवर्मा ने प्रतियोगिता का जो प्रबंध किया, वह कई लोगों को पसंद न आई। इसलिए वे लोग आगे नहीं आये। सुधीर का वेष बदल कर उपस्थित होने के पीछे यही रहस्य छिपा हुआ है। दूसरी बार अन्य राजकुमारों ने सुवर्णकुमारी के साथ विवाह करने से इसलिए अस्वीकार किया कि वह एक जंगली युवक के हाथों में पराजित होकर न्यायपूर्वक उसकी पत्नी बन गई। उसके साथ दूसरे व्यक्ति का विवाह करने का मतलब है कि वह दूसरी पत्नी बनेगी। सुधीर की बाबत ऐसी बात न थी। रविवर्मा ने अपनी पहली घोषणा को वापस लिया और किसी भी राजकुमार के साथ अपनी कन्या का विवाह करने की इच्छा प्रकट की, इसीलिए सुधीर राजकुमारी के साथ विवाह करने आगे आया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
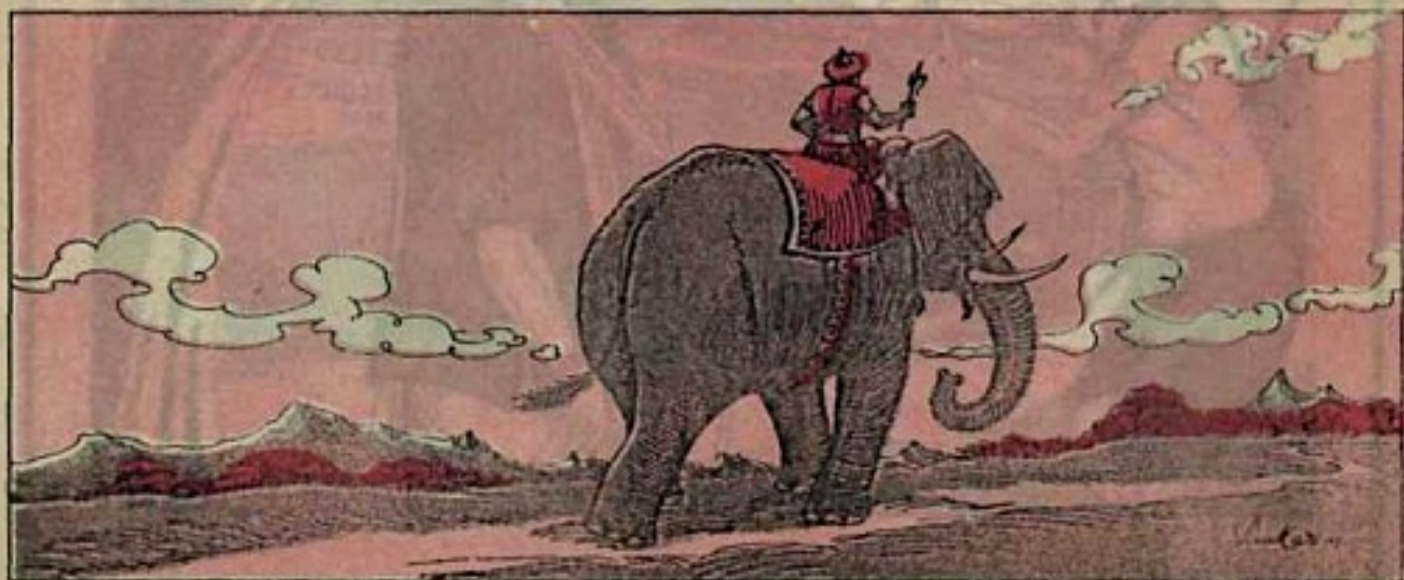
एक से बढ़कर एक

एक शिकारी ने एक बार एक गंध बिलाव को पकड़ लिया और उसे एक पेटी में बंद करके अपने परिचित एक बुजुर्ग के हाथ बेचने के ख़्याल से उसके घर ले गया। उस वक़्त वह बुजुर्ग घर पर न था। उसका छोटा भाई था। उसने शिकारी से पूछा–"पेटी में क्या है?"

"गंध बिलाव है।" शिकारी ने उत्तर दिया।

"उसका एक पर मुझे दे दो। मैं कई दिनों से गंध बिलाव के पर को मंगाना चाहता था।" बुजुर्ग के छोटे भाई ने कहा।

"इसका पर निकाला नहीं जा सकता।" यह कहते हुए शिकारी लौट आया।

रास्ते में बुजुर्ग से शिकारी की मुलाक़ात हुई। उसने पूछा–"पेटी में क्या है?"

"वैसे बात कुछ नहीं, इसमें गंध बिलाव है। आप के घर ले गया था। आप के छोटे भाई ने इसका एक पर माँगा, इसलिए वापस जा रहा हूँ।" शिकारी ने उत्तर दिया।

बुजुर्ग ने हँसकर कहा–"मेरे छोटे भाई ने गंध बिलाव का पर माँगा, वह पगला है। उसने इसे कछुआ समझ लिया होगा!"

बुद्धिमती पत्नी

श्यामलाल एक कुशल किसान था। उसने मेहनत करके अनेक एकड़ जमीन कमा ली। उसके हीरालाल और मोतीलाल नामक दो पुत्र थे। हीरालाल अपने पिता की भांति कड़ी मेहनत किया करता था, जब कि मोतिलाल अव्वल दर्जे का सुस्त था। वह कोई काम-धंधा करता न था।

श्यामलाल का जब देहांत हुआ, तब हीरालाल पच्चीस साल का जवान था। वह शादी-शुदा था और तब तक उसके दो बच्चे भी हुए थे। मोतीलाल बीस साल का नौ जवान था। अपने पिता के देहांत के बाद हीरालाल ने पिता की संपत्ति बांटकर मोतीलाल को दी। मोतीलाल अपनी माँ के साथ रहा करता था। खेत का काम खुद करता न था। उसने सारे खेत काश्तकारी पर दे दिये, और गाँव के गुंडों के साथ ताश खेलने में अपना समय बरबाद कर देता था।

ताश खेलते वक़्त बड़ी मोटी रक़म दाँव पर रखकर उसने बहुत सारा धन खो दिया। इकके बाद माता के हाथ का धन भी फूंक दिया। ताश खेलने के लिए जब धन उसके हाथ में न था, तब उसने अपने थोड़े से खेत गिरवी रखकर अपने भाई से कर्ज लिया। इस तरह दिन प्रति दिन मोतीलाल की हालत बिगड़ती गई।

मोतीलाल की माँ यह सोचकर व्याकुल रहने लगी कि अब उसके सुधरने का उपाय ही क्या है! एक बार वह अपनी बड़ी बहन को देखने पड़ोसी गाँव में गयी और अपने छोटे पुत्र की हालत पर दुख प्रकट किया।

बड़ी बहन ने सलाह दी–"एक अच्छी कन्या के साथ उसकी शादी करो। जिम्मेदारी के आने से वही सुधर जाएगा।"

"यह फिर पहले की तरह हो गया है! क्या करें?" सास ने शिवानी से पूछा।

"माँ जी, आप बिलकुल चिंता न करें। मैं कोई न कोई उपाय करूंगी।" शिवानी ने सास को धीरज दिया।

एक दिन रात को शिवानी ने अपने पति को समझाने की कोशिश की-"आप थोड़ा बहुत सावधान रहिए! ताशों के पीछे हम कंगाल होते जा रहे हैं!"

"बकवास बंद करो! क्या पत्नी के मुंह से सलाह पाने जैसा मूर्ख हूं मैं? आइंदा तुम कभी मुझे सलाह देने की धृष्टता न करो।" मोतीलाल ने डांट दिया।

शिवानी रो पड़ी, निंदा भी की, पर मोतीलाल ने उसकी एक न सुनी। उल्टे उसने बताया-"यह बात सही है कि मैं फिलहाल धन खो रहा हूँ, मगर फिर हमें सारा धन जीतकर जो कुछ खोया है, उसे वसूल करना होगा! यही जुए का रहस्य है! तुम नाहक़ मुझे तंग मत करो।"

शिवानी का एक रिश्तेदार दियासलाई की कंपनी में काम करता था। वह बड़ा ही अक़्लमंद था। वह थोड़ा-बहुत जादू के करिश्मे जानता था। अपने पति में परिवर्तन लाने के लिए शिवानी ने अपने रिश्तेदार की मदद लेने का निश्चय किया और अपनी सास की अनुमति लेकर मायके

"तुम्हारी नजर में कोई अच्छी कन्या है?" मोतीलाल की माँ ने पूछा।

"हमारे पड़ोस में शिवानी नामक एक अच्छी कन्या है। वह सुंदर, होशियार और बुद्धिमती भी है।" बड़ी बहन ने समझाया।

माँ ने घर लौटकर मोतीलाल को रिश्ते का समाचार सुनाया। वह शादी करने के लिए तैयार हो गया। शादी ठाठ-बाट से संपन्न हुई। शादी के बाद थोड़े दिन मोतीलाल ताश खेलने नहीं गया। मगर दिन के बीतते-बीतते ताश खेलने की लत भी बढ़ती गई। अब उसने घर की जिम्मेदारी से भी अपना हाथ खींच लिया।

पहुँची। एक दिन उसने अपने रिश्तेदार को खबर भेजी। उसने शिवानी के पति के बारे सारी बातें सावधानी से सुनीं और उसकी सहायता करने का आश्वासन भी दिया। शिवानी निश्चित हो अपनी ससुराल को लौट आई।

एक दिन दुपहर को मोतीलाल नहाने जा रहा था, तभी उसके कमरे में अचानक ज्वाला उठी और मेज़ पर की पुस्तकें तथा कागज़ भी जल गये।

शिवानी चिल्ला उठी–"आग लग गई है, आग!" मोतीलाल दौड़कर आ पहुँचा और उसने तत्काल आग बुझा दी।

"अरे, यह तो बड़ी ही आश्चर्य की बात है। मेज़ पर कैसे आग लग गई? वक़्त पर तुमने देख लिया, वरना सारा घर जलकर राख हो जाता।" मोतीलाल ने कहा।

"मैं बिस्तर ठीक कर रही थी तभी मुझे धुआं दिखाई दिया, उसी वक़्त मुझे यह ज्वाला दिखाई दी, मैं डर के मारे चिल्ला उठी।" शिवानी ने उत्तर दिया।

दूसरे दिन निद्रा से जागते ही शिवानी ने अपने सपने की बात मोतीलाल को सुनाई। उसने बताया–"एक प्रकाशमान रथ पर बैठकर एक मुनि उनके घर आया। उसने समझाया–बेटी! ताश के पत्ते तुम लोगों का सर्वनाश करने के लिए तुम्हारे घर में पहुँच गये हैं। उनकी वजह से तुम लोगों का सर्वस्व नष्ट हो जाएगा।"
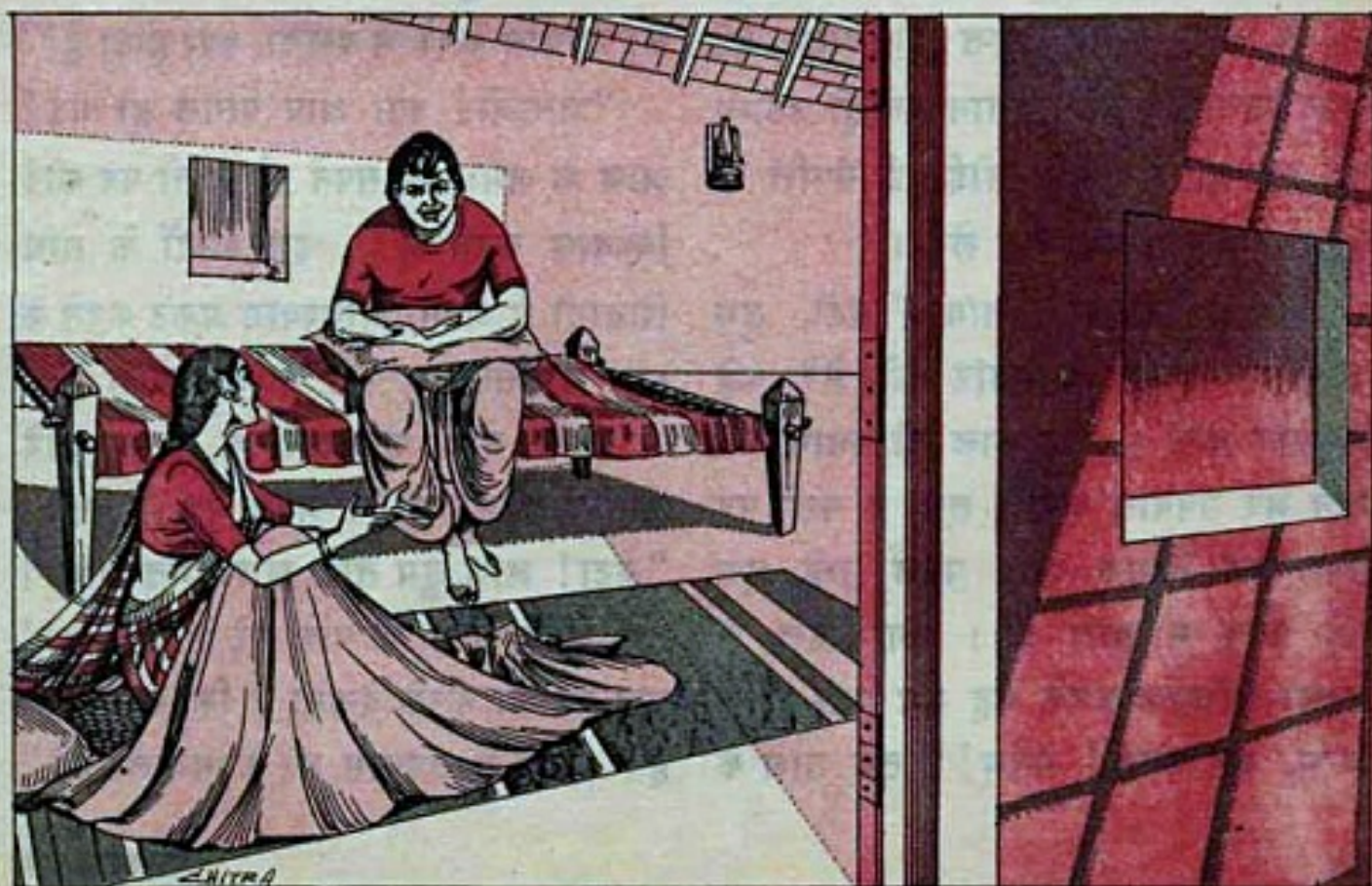
मैंने उन्हें समझाया—"साधू महाराज! ऐसी बात नहीं, ताश के द्वारा ही हमें संपत्ति और आनंद प्राप्त होनेवाला है! चाहे फिलहाल हमें नुक़सान भले ही उठाना पड़ रहा हो, मेरे पति खोई हुई संपत्ति से दुगुना ब्याज सहित जीत लेंगे।"

साधु ने हँसकर बताया—"बेटी, तुम चाहो तो अगले शनिवार को मेरे कहे अनुसार करो। प्रातःकाल ही स्नान कर दिन भर उपवास करो। ताश के पत्तों पर गंगा जल छिड़क दो। पहले उन्हें एक नये वस्त्र में बाँध दो। गंगा जल से उनका अभिषेक करके यह मंत्र पढ़ो—"ओं करम, ओं करम! सर्वम्!" तब ताश के पत्तों को जल्दी जल्दी मिला दो, तब उनका प्रभाव तुम्हें स्वयं मालूम होगा!"

यह सारी कहानी सुनाकर शिवानी बोली—"वैसे इस तरह के सपनों के प्रति मेरा बिलकुल विश्वास नहीं है! फिर भी हम इसकी जांच करने के लिए शौक से करके देखेंगे, क्या होता है?"

तभी शिवानी की सास वहाँ पहुँची और उसने पूछा—"अरी शिवानी, यह तुम क्या कह रही हो? मैं भी तो सुनूँ?"

शिवानी ने अपनी सास को सपने का सारा वृत्तांत कह सुनाया।

इस पर सास बोली—"शिवानी, यदि तुम्हें अपने सपने पर विश्वास नहीं है तो छोड़ दो! मुझे तो करने दो। शनिवार को उपवास करके मैं देखूँगी, क्या होता है?"

"सासजी! क्या आप पागल हो गईं? आज के जमाने में सपने की बातों पर कोई विश्वास करते हैं?" इन शब्दों के साथ शिवानी ने अपना अविश्वास प्रकट करने के स्वर में हँसते हुए पति की ओर देखा।

इसके बाद शनिवार के दिन सवेरे मोतीलाल की माँ ने अपने पुत्र से कहा—"बेटा! आज तुम ताश खेलने मत जाओ! तुम अपने ताश के पत्ते मेरे हाथ दे दो! मुझे परीक्षा करके देखना है कि क्या होता है? आज मैं उपवास भी करनेवाली हूँ!"

"माँ, तुम सचमुच सपने के समाचार के अनुसार करने जा रही हो?" मोतीलाल ने पूछा।

"हाँ, बेटा! सचमुच में करके देखूँगी!" माँ ने दृढ़ स्वर में जवाब दिया।

मैं ताश के पत्ते अभी न दूँगा; दुपहर को ले लो। मुझे ताश खेलने से रोकने के लिए यह बहाना बनाया है!" मोतीलाल ने कहा।

उस दिन दुपहर को मोतीलाल घर लौटा, ताश के पत्ते मेज़ पर रखकर स्नान करने चला गया। स्नान के बाद भोजन करके वह सो गया।

संध्या के समय माँ ने आकर मोतीलाल को जगाया और कहा—"बेटा, मैं अभी ताशों का प्रयोग करने जा रही हूँ।" तभी शिवानी वहाँ पहुँचकर हँसते हुए बोली—"यह तो सासजी का पागलपन है।" फिर पति-पत्नी एक दूसरे की ओर देख हँस पड़े।

मोतीलाल ने मेज़ पर रखे ताश के पत्तों को इकट्ठा कर अपनी माँ के हाथ दे दिया। मोतीलाल की माँ एक छोटी-सी बोतल में गंगा जल ले आई, ताशों पर छिड़ककर उन्हें एक नये वस्त्र में बांध दिया। पात्तों को हिलाकर जोर से मंत्र पढ़ते रगड़ डाला।

कुछ ही क्षणों में ताश के पत्तों में से धुएँ के साथ आग की लपटें निकलीं। मोतीलाल की माँ ने ताश के पत्तों को ज़मीन पर फेंक दिया, वे जलकर राख

हो गये। उस दृश्य को देख तीनों के चेहरे आश्चर्य से भर उठे।

"शिवानी! देखती हो न? तुम्हारा सपना सचमुच सच निकला।" मोतीलाल ने गद्गद कंठ से कहा।

"अजी, आप इसी बात को लेकर डरते हैं? आप कृपया जुआ खेलना बंद न कीजिएगा! हमने जो कुछ जुएँ में खो दिया, वह एक न एक दिन अवश्य फिर से प्राप्त होगा।" शिवानी ने कहा।

मगर मोतीलाल का कलेजा काँप उठा। दूसरे दिन से उसने ताश खेलना बंद किया। उसके भीतर बहुत बड़ा मानसिक परिवर्तन हो गया। शिवानी की प्रेरणा से उसने काम-धंधा करना शुरू किया। उसके बड़े भाई ने मोतीलाल के सारे खेत उसे वापस कर दिये। कुछ ही दिनों में मोतीलाल एक अच्छा किसान बना। शिवानी का प्रयत्न इस रूप में सफल हुआ।

आखिर शिवानी ने किया क्या था? उसके रिश्तेदार ने शिवानी के हाथ दो प्रकार के पदार्थ दिये थे। एक पदार्थ वह था जो दियासलाई की पेटी के दो तरफ़ मल दिया जाता है और दूसरी चीज़ दियासलाई की काड़ियों के शिरोभाग पर पोती जाती है। शनिवार के दिन मोतीलाल जब सो रहा था, तब शिवानी ने ताश के पत्तों में से पान और चिड़िया के इक्कों को निकालकर उनकी बिंदुओं पर दवा मल दी। उसके सूख जाने पर दोनों को आमने-सामने इस तरह रख दिया जिससे एक दूसरे का स्पर्श कर सके और उन पत्तों को अन्य पत्तों के बीच रख दिया, शिवानी की सलाह पर उसकी सास ने गंगा जल के बदले अर्क़ छिड़क दिया। उसकी गंध से बचने के लिए अगर बत्तियाँ जला दीं। ताश के पत्तों को रगड़ने पर दोनों इक्कों की रगड़ से आग पैदा हुई। अर्क़ के कारण वह लपटों के रूप में बदल गई। पर बेचारा मोतीलाल इस रहस्य को जानता न था। उसने उसे पूर्ण सत्य माना।

१७३. "सात चूल्हे"

जापान के गंकै नामक समुद्री तट पर पर्वतों की पंक्ति में समुद्री जल के आघात से बनी सात गुफाएँ हैं। उनका नाम "नमत्सुगम" है, अर्थात सात चूल्हे हैं। समुद्र में जब ज्वार आता है तब नाविक यात्रियों को उन गुफाओं के भीतर ले जाते हैं। इन्हें "सहज स्मृति चिह्नों" का ओहदा दिया गया है। उस प्रदेश तक पहुँचने के लिए करत्सु से जमीन के रास्ते बस में जाने में आधे घंटे का समय लगता है।

दुनिया का रवैया

एक ज़मीन्दार के मन में अचानक 'दान कर्ण' की उपाधि पाने की इच्छा पैदा हुई। लेकिन वह स्वभाव से बड़ा ही कंजूस था। दान माँगने यदि कोई उसके घर आ जाता, तो कोई न कोई बहाना बनाकर उसे खाली हाथ लौटा देता था। वह किसी से यह न कहता था कि मैं धन नहीं दूंगा, पर धन देने के पीछे कोई न कोई शर्त रखता था।

उसी गाँव में रंगनाथ नामक एक अनाथ बालक था जो, गाँव भर के लोगों के कामों में हाथ बंटाकर अपने दिन बिता देता था। उसने सुना कि ज़मीन्दार दान-धर्म करते हैं, इसलिए वह भी दान पाने के ख़्याल से ज़मीन्दार के घर पहुँचा।

ज़मीन्दार ने पूछा—"तुम क्या चाहते हो?"

"सरकार! मैं एक ऐसा अभागा हूँ कि मुझे कोई नहीं जानता। यदि आप मेहर्बानी करेंगे तो दान पाने के ख़्याल से आया हूँ।" रंगनाथ ने कहा।

"सचमुच तुमको कोई नहीं जानता? तुम ऐसे लोगों को जो तुम्हें बिलकुल नहीं जानते, जितनी संख्या में मेरे पास लाओगे, उतने ही सौ चांदी के सिक्के मैं तुम्हें दूँगा।" ज़मीन्दार ने शर्त रखी।

"यह कौन बड़ी बात है, सरकार! ऐसा ही करूँगा।" यों कहकर रंगनाथ जाने को हुआ, तभी ज़मीन्दार ने उसको रोककर कहा—"सुनो, जिस दिन तुम पहले पहल जिस अपरिचित व्यक्ति को देखोगे, उसी को लाना होगा।"

रंगनाथ ने मान लिया। उस दिन रंगनाथ ने सब से पहले जिस आदमी को देखा, वह उसका परिचित था। दूसरे दिन रंगनाथ तड़के ही जाग पड़ा। ऐसी गली में पहुँचा, जिस में वह कभी गया

न था। एक गली को पार कर नुक्कड़ में घूमने को हुआ तभी एक भिखारी उसके सामने आया और बोला–"रंगनाथ, क्या बात है? आज बड़े सवेरे इस गली में आये?" फिर क्या था, उस दिन के सौ चाँदी के सिक्के जाते रहे। वह भिखारी लंगड़ा था, कभी उसकी बैसाखी नीचे गिर गई थी, रंगनाथ ने उसे उठाकर बैसाखी उसके हाथ थमा दी थी। इस कारण भिखारी रंगनाथ को जानता था।

दूसरे दिन रंगनाथ गाँव की सीमा पर पहुँचा। रंगनाथ ने देखा कि पड़ोसी गाँव से कोई व्यक्ति आ रहा है, वह बड़ा खुश हुआ। उसका चेहरा कोई परिचित सा न लगा।

"महाशय! मैं आप को नहीं जानता हूँ। आप कृपया कष्ट न मानकर मेरे साथ थोड़ी देर के लिए ज़मीन्दार के घर तक चल सकते हैं?" रंगनाथ ने कहा।

उस व्यक्ति ने रंगनाथ की ओर एक बार निहार कर कहा–"अरे, तुम रंगनाथ हो? बताओ, अब हमें ज़मीन्दार के घर जाने की क्या ज़रूरत है?"

रंगनाथ बड़ा निराश हुआ और बोला–"जी हाँ, अब वहाँ पर जाने की कोई ज़रूरत नहीं है।" यों कहकर वह भी उस व्यक्ति के पीछे गाँव में लौट आया। वह व्यक्ति गाँव के पटवारी का ससुर था! एक दिन रंगनाथ ने उस व्यक्ति के

पैर दबाये थे। जिस कारण रंगनाथ आज सौ चांदी के सिक्के का मौक़ा खो बैठा।

रंगनाथ ने सोचा था कि प्रति दिन सौ चांदी के सिक्कों के हिसाब से कई हज़ार सिक्के जमा कर वह जल्द ही धनी बन जाए! लेकिन दुर्भाग्य उसका पीछा कर रहा था। प्रति दिन उसे परिचित व्यक्ति ही दिखाई देते थे।

रंगनाथ ने अब उस गाँव को छोड़कर कम से कम एक सौ सिक्के कमाना चाहा। रात भर पैदल चलकर रंगनाथ एक दूसरे गाँव में जा पहुँचा। वह थक गया था, इसलिए उसने थोड़ी देर के लिए सुस्ताना चाहा। उसने एक घर के सामने पहुँचकर दर्वाज़े पर दस्तक दी। उस घर की मालिकिन अपने बेटे को डाँटते कह रही थी–"सुबह ही सुबह उठकर तुम मुझे तंग करते हो! यदि मैं मर जाऊँ तो तुम्हें भी पड़ोसी गाँव के रंगनाथ जैसे हर घर में चाकरी करते जीना पड़ेगा! कमबख्त कहीं का!"

इन शब्दो के साथ उस औरत ने दर्वाजा खोला। रंगनाथ ने उस औरत का चेहरा देखना न चाहा, पर देखे बिना रह न पाया। इसलिए उस दिन के सौ सिक्के भी जाते रहे।

वह औरत भली थी। उसने रंगनाथ को आश्रय दिया। रंगनाथ जब सोकर उठा, तब उस औरत ने उसे खाना खिलाया। उस गाँव में रंगनाथ का नाम एक लोकोक्ति के रूप में लिया जा रहा था, इसलिए वह उस गाँव को छोड़ दूसरे गाँव में चला गया।

वहाँ पर भी उसे दुर्भाग्य से पाला पड़ा। रंगनाथ के गाँव के एक किसान की लड़की उस गाँव में ब्याही गई थी। उस गाँव में क़दम रखते ही रंगनाथ ने उसी औरत को देखा। उसने रंगनाथ का कुशल-क्षेम पूछा और उसे खिलाया-पिलाया।

अब रंगनाथ को अपनी भूल मालूम हो गई। इन नये गाँवों में यदि उसका

कोई अपरिचित उसे दिखाई भी दे तो उसे अपने गांव के ज़मीन्दार के यहाँ ले जाना संभव नहीं है। इसलिए रंगनाथ ने दूसरे गाँवों में भटकने का अपना इरादा त्याग दिया और एक नये गांव में सब की मदद करते अपने दिन काटने लगा।

इस प्रकार बीस साल गुजर गये। पर रंगनाथ के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया। एक दिन उसके मन में अपने गाँव जाने की प्रबल इच्छा हुई। बड़ी मुश्किल मे वह अपने गाँव में पहुँचा। इन बीस साल के अंदर गाँव की हालत में बड़ी तब्दीली हो गई थी। वहाँ पर रंगनाथ को एक ने भी नहीं पहचाना। लोग भी बिलकुल बदल गये थे।

रंगनाथ ने सोचा कि यदि पुराना ज़मीन्दार ज़िंदा हो तो बड़ी आसानी मे सौ सिक्के कमाये जा सकते हैं, लेकिन रंगनाथ को मालूम हुआ कि उस ज़मीन्दार की मृत्यु हो गई है और उसका बेटा ज़मीन्दार बन बैठा है!

रंगनाथ नये ज़मीन्दार के घर गया। उसने अपनी सारी कहानी सुनाकर कहा—"इस वक्त मुझे गाँव के लोगों में से कोई नहीं जानते। इसलिए प्रति दिन एक आदमी के पीछे सौ सिक्के दिलाकर अपने पिता के वचन का पालन कीजिए!"

ज़मीन्दार के पुत्र ने हँसकर कहा—"मैं नहीं जानता कि तुम कौन हो? तुम्हारे बारे में मेरे पिताजी ने कभी कुछ नहीं
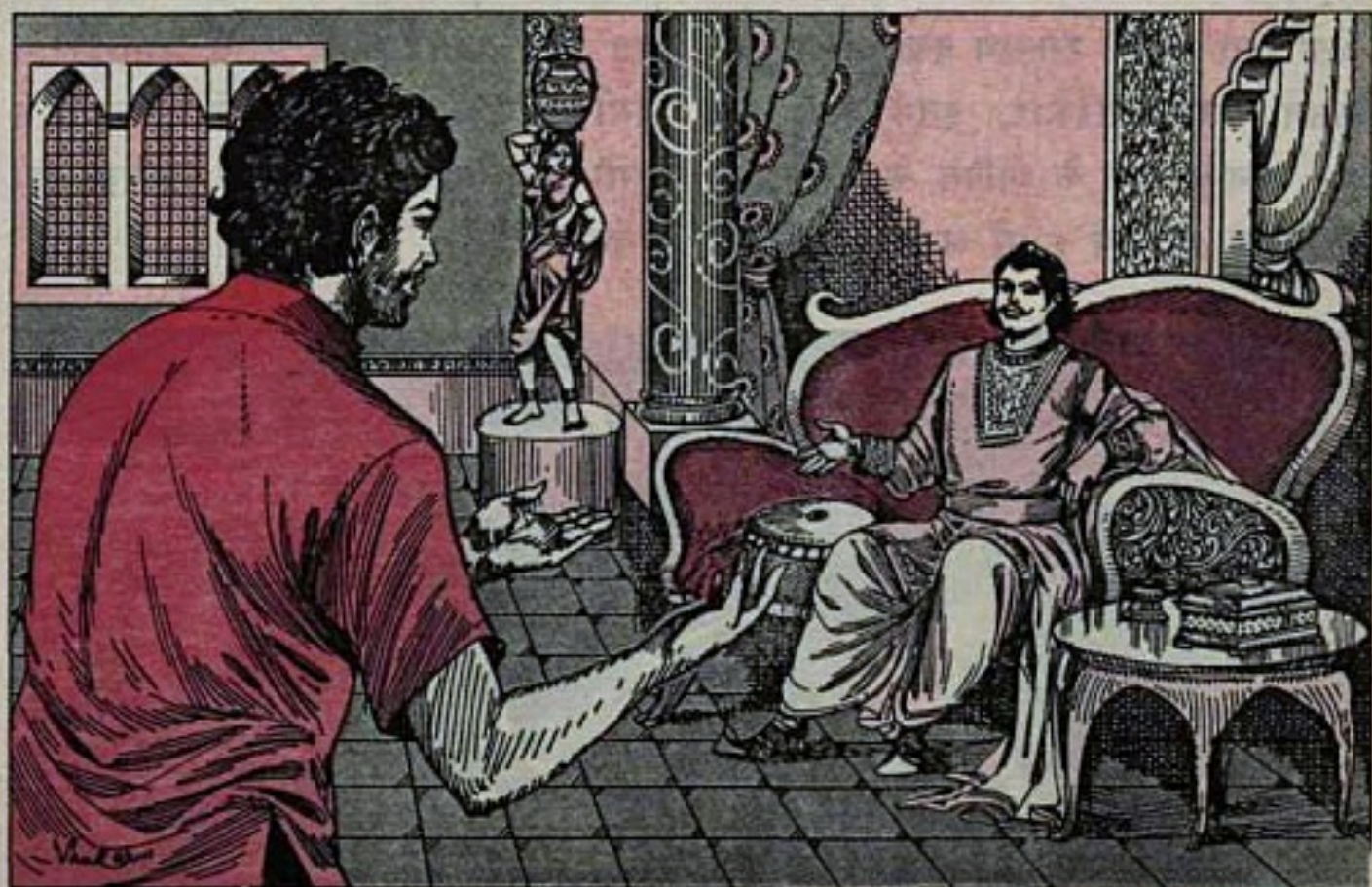
कहा था। लेकिन मैं भी अपने पिता की तरह दान कर्ण हूँ। इसलिए तुम मेरी एक शर्त का पालन करोगे तो तुम्हें दान दे सकता हूँ। किसी भी दिन यदि तुम्हें सर्व प्रथम देखने वाला व्यक्ति तुरंत पहचान ले तो उसे तुम मेरे पास ले आओ; मैं तुम्हें दो सौ चांदी के सिक्के दूँगा। तुम रोज़ दो सौ सिक्के कमा सकते हो!"

रंगनाथ को यह शर्त बड़ी फ़ायदेमंद लगी। वह ख़ुशी-ख़ुशी वहाँ से लौट आया।

रंगनाथ ने गांव के अपने परिचितों की खोज बराबर की, दिन और सप्ताह बीत गये। लेकिन फिर भी वह दो सौ सिक्के कमा न पाया।

एक दिन प्रातःकाल रंगनाथ गांव की सीमा पर पहुँचा, तभी उधर से एक घोड़ा-गाड़ी आ निकली। उसमें नया ज़मीन्दार बैठा हुआ था। रंगनाथ बड़ा प्रसन्न हुआ, उसने कहा–"सरकार, इतने दिन बाद मेरे जान-पहचान के व्यक्ति के दर्शन सब से पहले हो गये। मैं अभी आप के घर पहुँच जाता हूँ। दो सौ सिक्के दिलवा दीजिए।"

"तुम कौन हो? दो सौ सिक्के कैसे?" ज़मीन्दार ने खीझकर पूछा।

रंगनाथ ने अपनी सारी कहानी सुनाई। "अरे, ऐरे-गैरे नत्थूखैरों को याद रखने के सिवा क्या मेरे और कोई काम नहीं? जा, बे, जा!" ज़मीन्दार ने आगे बढ़ते हुए कहा।

रंगनाथ को अब अपनी मूर्खता समझ में आ गई। उसने मन में सोचा–"ये बड़े लोग बड़े ही होशियार होते हैं! वे जानते हैं कि उनके चारों तरफ़ जीनेवाले लोग कैसे होते हैं! आज के ज़माने में सभी लोग भले आदमी हैं! उन दिनों में छोटी से छोटी मदद तक को लोग याद रखते थे। आज तो पड़ोसी तक का ख्याल नहीं है। यह बात जानकर ही पुराने ज़मीन्दार ने वैसी शर्त रखी, तो इस नये ज़मीन्दार ने ऐसी शर्त रखी! यही तो दुनिया का रवैया है!"

कंजूस की मेहमानदारी

वेंकटाद्रि अव्वल दर्जे का कंजूस था। एक दिन उसके घर शोभनाद्रि नामक एक रिश्तेदार आ धमका। शोभनाद्रि का रवैया देखने से वेंकटाद्रि को लगा कि वह खाना खाकर ही जाएगा। वेंकटाद्रि ने अपनी पत्नी से कहा–"अरी सुनो तो! शोभनाद्रि बहुत दिन बाद आया है। खाना खाकर ही जाएगा! इसलिए तुम ऐसा करो–'एक को दो कर दो और दो को एक बना दो। समझी!' फिर शोभनाद्रि से बोला–"मैं बाजार हो आता हूँ। तुम आराम कर लो।" यह कहकर वह चला गया।"

शोभनाद्रि ने सोचा कि आज उसके आतिथ्य का बढ़िया इंतज़ाम होगा। इस विचार से वह सो गया। जब उसकी आँख खुली, संध्या होने को थी। उसे बड़ी भूख लगी थी।

वेंकटाद्रि संध्या को घर लौटा और पत्नी से बोला–"सुनो तो, रसोई बन गई है न? जल्दी परोस दो।"

वेंकटाद्रि और शोभनाद्रि हाथ-मुँह धोकर खाने बैठे। वेंकटाद्रि की पत्नी ने उन्हें चावल के साथ साग और उसके डंटल से बनी सूखी तरकारी परोस दी। शोभनाद्रि ने भोजन में कोई विशेष व्यंजन न देख निराश हो पूछा–"भाई, तुमने तो एक को दो और दो को एक बना देने की बात कही थी! इसका मतलब क्या है?"

"मतलब तो साफ़ है! आज के ज़माने में हर चीज़ के भाव बढ़ते जा रहे हैं! घर में सिवाय साग के कुछ है ही नहीं, मैंने उसी को दो तरह की तरकारी बनाने को कहा। महंगाई के दिन हैं, इसलिए दुपहर और रात के भोजन को एक करके संध्या को बनाने को कहा।" वेंकटाद्रि ने जवाब दिया। शोभनाद्रि असली बात ताड़ गया और भोजन के समाप्त होते ही विदा लेकर अपने गाँव चला गया।

सुलतान की महाजनी

फारस का सुलतान सैय्यद अब्दुल्ला मनोरंजन के प्रदर्शनों को बहुत चाहता था। उनके गद्दी पर बैठने के प्रथम वर्ष में ही हिसाब लगाने पर पता चला कि इन प्रदेर्शनों के पीछे दो लाख दीनार खर्च हो गये हैं। हर साल सुलतान के मनोरंजन के प्रदर्शनों के पीछे दो लाख दीनार खर्च हो जाय तो शासन के अन्य कार्यों के लिए धन पर्याप्त न होगा।

इसलिए एक दिन सुलतान और वजीर ने बैठकर मंत्रणा की और वे एक निर्णय पर पहुँचे। वह यह था कि महाजनी को क़ानूनन स्वीकार करके महाजनी करनेवालों पर कर लगा दिया जाय। इससे किसी का कोई नुक़सान नहीं होगा जिन्हें धन की ज़रूरत होगी, उन्हें आसानी मे कर्ज मिल जाएगा। जो सूद पर रुपये उधार में देते हैं, उन्हें सूद भी मिल जाएगी। साथ ही कर लगाने मे खजाने के लिए अतिरिक्त आमदनी भी हो जाएगी।

इसके बाद सुलतान ने महाजनी को अमल करते हुए क़ानून बनाया और कर्ज न चुकानेवाले लोगों के लिए उचित दण्ड की भी व्यवस्था की। इस क़ानून के अमल होते ही धनी लोग बहुत प्रसन्न हुए। वे लोग अधिक ब्याज पर उधार देने लगे। इस पर आपत्ति उठाया गया तो उन लोगों ने बताया—"हमें तो मुंशी को तनख्वाह देनी है, सुलतान को कर चुकाना है और ब्याज के मद्दे थोडा-बहुत हमें बचाना भी है! ऐसी हालत में ज्यादा सूद वसूल न करें तो हमारा व्यापार ही कैसे चलेगा?"

थोड़े समय बाद सुलतान की बीबी ने सोचा कि यह नया क़ानून कैसे अमल होता है, देख तो ले! उसने अपनी दासी को बुलाकर अपनी यह इच्छा प्रकट की।

दासी ने कहा–"मालिकिन! व्यापार तो खूब चलता है। धनी लोग गरीबों का खून चूस रहे हैं। लाचार होकर जो लोग कर्ज लेते हैं, उनके न चुकाने की हालत में अशांति फैली हुई है।"

यह बात सुनने पर सुलताना का दिल काँप उठा। सुलतान के साथ सुलताना ने भी यही विश्वास किया था कि महाजनी के द्वारा जनता और सरकार का भी लाभ होता है, मगर उसका परिणाम तो भयंकर निकला। सुलताना ने यह बात सुलतान से बताई, पर उसने कहा–"महाजन जो सूद वसूल करता है, उसके लिए जो तैयार होते हैं, वे ही लोग उधार लेते हैं। उधार लेकर न चुकाना तो क़ानून का तिरस्कार करना होता है!"

"तब तो मैं भी महाजनी का व्यापार करूँगी। मुझे एक हज़ार दीनार दिलाइए। मैं भी कर चुकाऊँगी। वह आप के खर्च के काम आएगा।" सुलताना ने पूछा। सुलतान ने इसे मान लिया।

सुलताना की महाजनी के संबंध में दरबार के सभी लोगों को मालूम हो गया। राजमहल के एक पहरेदार ने अपनी किसी खास ज़रूरत के लिए सुलताना से सौ दीनार कर्ज लिया और ब्याज के रूप में पचास दीनार देने को उसने मान लिया। इसी प्रकार एक दल के अधिपति ने सुलताना से दो सौ दीनार कर्ज लेकर पचास हज़ार दीनार ब्याज देने को मान लिया। आखिर वज़ीर ने भी सुलताना के यहाँ से पाँच सौ दीनार कर्ज लेकर सौ दीनार ब्याज देने को मान लिया।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन सुलतान शहर में घूमने अकेले ही चल पड़ा। जब वह शहर के छोर पर पहुँचा, तब उसे बड़ी भूख लगी। निकट ही उसे एक गरीब का घर दिखाई दिया। सुलतान घोड़े से उतर पड़ा और गरीब के घर पहुँचकर दर्वाजा खट-खटाया।

उन पदार्थों को खाते सुलतान विस्मय में आ गया। वह प्रति दिन जो भोजन करता है, उससे किसी भी हालत में यह भोजन कम न था। सुलतान ने भाँप लिया कि उसे ऐसा बढ़िया खाना खिलाने के लिए गरीब ने उधार ले लिया होगा।

इसलिए राजमहल को लौटते ही सुलतान ने एक हजार दीनार वजीर के हाथ देकर समझाया–"इन्हें ले जाकर अमुक गरीब के घर दे आओ।"

यह बात मालूम होते ही सुलताना ने वजीर को अपने यहाँ बुलवाकर अपना कर्ज छे सौ दीनार तुरंत चुकाने को कहा। विवश होकर वजीर ने अपने हाथ के एक हजार दीनारों में छे सौ निकालकर दे दिये।

इसके बाद वजीर ने दल के अधिपति को बुलाकर आदेश दिया–"ये चार सौ दीनार ले जाकर तुम अमुक जगह के अमुक गरीब के हाथ पहुँचा दो।"

दल के अधिपति के हाथ जब ये चार सौ दीनार लगे, तब सुलताना ने उसे बुलवाकर अपने उधार के ढाई सौ दीनार तत्काल चुकाने का आदेश दिया। उसने भी लाचार होकर ढाई सौ दीनार सुलताना के हाथ सौंप दिया और बाकी डेढ़ सौ दीनार राजमहल के पहरेदार के हाथ देकर अमुक गरीब को दे आने की आज्ञा दी।

गरीब ने दर्वाजा खोला, सामने सुलतान को देख झुककर सलाम किया और सुलतान से भीतर आने का निवेदन किया।

मुझे बड़ी भूख लगी है, पहले खाना खिलाओ।" सुलतान ने पूछा।

"आप थोड़ी देर आराम कीजिएगा, तब तक मैं खाने का इंतज़ाम कर देता हूं।" गरीब ने जवाब दिया। वह तुरंत निकट के एक धनी के घर दौड़ गया। पचास दीनार कर्ज लेकर क़ीमती खाने के पदार्थ खरीद लाया। उसकी बीबी ने जल्द ही राजोचित भोजन तैयार करके सुलतान को परोस दिया।

मगर सुलताना ने पहरेदार को भी बुलवाकर अपने कर्ज के डेढ़ सौ दीनार तत्काल चुकाने की धमकी दी। उसने डेढ़ सौ दीनार सुलताना के हाथ दे दिये।

थोड़े दिन और बीत गये। एक दिन एक धनी ने एक गरीब को दरबार में लाकर शिकायत की कि उसने उसका कर्ज नहीं चुकाया है। सुलतान ने गरीब से पूछा–"तुमने उधार किसलिए लिया?"

"सरकार! एक दिन आपने मेरे घर आथिथ्य स्वीकार किया है। आप को अच्छे ढंग से खिलाने के ख़्याल से मैंने इस धनी के यहाँ कर्ज लिया और उसे आज तक चुका न पाया।" गरीब ने कहा।

"अरे, यह तुम क्या कहते हो? मैंने उसी दिन तुम्हें पुरस्कार स्वरूप एक हजार दीनार भेजे थे, उन्हें क्या किया?" सुलतान ने पूछा।

"हुजूर! मुझे एक भी दीनार आज तक प्राप्त न हुआ।" गरीब ने आश्चर्य के साथ कहा।

तत्काल वजीर उठ खड़ा हुआ और बोला–"हुजूर! एक हजार दीनारों में से मुझे सुलताना साहिबा को छे सौ दीनार कर्ज चुकाना पड़ा था, बाक़ी चार सौ दीनार मैंने दल के अधिपति के हाथ दे दिया है। दल के अधिपति तथा पहरेदार

न भी बताया कि उनके हाथ जो धन दिया गया, वह सुलताना साहिबा का उधार चुकाने में लगा देना पड़ा है।"

"तुम तीनों अपराधी हो! जिस कर्ज को तुम लोग चुका न सके, ऐसा कर्ज करना प्रथम अपराध है। सरकारी धन को निजी काम में लगाना दूसरा अपराध है। तुम तीनों को दो-दो साल की सजा दे रहा हूँ।" सुलतान ने कहा।

इसके बाद सुलतान ने गरीब की ओर मुड़कर कहा–"दरिद्र होते हुए भी तुमने कर्ज लिया, इसमें तुम्हारा उद्देश्य क्या है? मैं तुम्हें दावत देने के लिए थोड़े ही कहा था? तुम जिस कर्ज को चुका न सकते थे,

ऐसा कर्ज लेना हमारी नजर में अपराध है! इसलिए तुम्हें एक साल की सजा सुनाता हूँ।"

फिर भी सुलतान का मन विकल था। उस दिन रात को उसने सुलताना से कहा– "आज से तुम अपनी महाजनी बंद कर दो।"

"हुजूर! आप यह क्या कह रहे हैं? मेरे व्यापार के द्वारा आप का नुक़सान ही क्या हुआ?" सुलताना ने आश्चर्य प्रकट किया।

"तुम्हारे व्यापार के कारण ही आज मैंने चार लोगों को कारागार में भेज दिया है। हिसाब लगाकर देखो, तुम्हारे व्यापार से जो दो सौ दीनार बचते हैं, उससे दो वर्ष तक उनके खाने का खर्च निकल आता है या नहीं?" सुलतान ने पूछा।

तुरंत सुलताना साहिबा ने क़लम और क़ागज़ लेकर हिसाब लगाया और कहा– "हुजूर! एक वर्ष के लिए उन चारों के पीछे आठ सौ दीनार खर्च हो जाते हैं। दो वर्षों के लिए सोलह सौ दीनार खर्च होते हैं।"

"अब समझ गयी हो न कि तुम्हारी महाजनी के जरिये खजाने को कितना नुक़सान होता है?" सुलतान ने कहा।

"तब तो आप ने महाजनी का जो व्यापार अमल किया, उससे खजाने को कितनी आमदनी होती है?" सुलताना ने पूछा।

"दो लाख दीनार।" सुलतान ने जवाब दिया।

"अब तक कर्ज न सकनेवाले कितने लोग कारागार में हैं?" सुलताना ने फिर पूछा।

"क़रीब बीस हज़ार लोग।" सुलतान ने कहा।

सुलताना ने हिसाब लगाकर छाती पीटते हुए कहा–"उन लोगों के पीछे करीब दस लाख खर्च होता है!"

फिर क्या था, दूसरे ही दिन शहर में महाजनी का क़ानून रद्द हो गया।

तलवार की कीमत

एक प्रसिद्ध शिल्पी ने बारीकी नक्काशी के साथ एक तलवार बनाई और राजा की जन्मगांठ के दिन उसे पुरस्कार के रूप में दिया। राजा ने तलवार लेकर कहा–"इस शिल्पी को एक सौ रजत मुद्राएँ देकर भेज दो।" "महाराज! ऐसी अपूर्व कला की वस्तु के लिए इतना छोटा पुरस्कार?" शिल्पी ने विस्मय में आकर पूछा।

"देखने में सुंदर रही तो क्या हुआ? यह सिर्फ़ अजायब घर में रखने के लिए काम देगी। इसके अलावा इसकी उपयोगिता ही क्या?" राजा ने कहा।

"जो राजा कला की क़ीमत आँकना न जानते हैं, उनके जिंदा रहने या मरने में क्या फ़र्क पड़ता है?" इन शब्दों के साथ शिल्पी अपनी कमर में से तलवार खींचकर राजा की छाती में भोंकने को हुआ। राजा ने तत्काल अपनी तलवार खींचकर शिल्पी का सामना किया और उसकी तलवार को काट दिया।

इस पर शिल्पी ने कहा–"महाराज! आप मेरी धृष्टता को क्षमा करें। मैंने जो तलवार बनाई, वह केवल शोभा की वस्तु नहीं, यही साबित करने के लिए मैंने ऐसा किया।"

राजा ने शिल्पी की करनी पर प्रसन्न हो उसे दस हज़ार मुद्राएँ दे दीं।

औरत का हठ

मंगू मुखिया का माली था। मुखिया के बाग में सब तरह की तरकारियाँ पैदा होती थीं।

मंगू की औरत झुनिया ने एक दिन पड़ोसी औरत के बरी बनाते देखा, उसके मन में भी बरी बनाने की इच्छा हुई। कुम्हाड़ा खरीदने के लिए पैसे पास में न थे। मुखिया के बाग में दर्जनों कुम्हाड़े हैं। मुँह अंधेरे एक कुम्हाड़ा तोड़ लायेंगे तो क्या मुखिया थोड़े ही देखनेवाले हैं?

यों सोचकर झुनिया ने अपने पति को खाना परोसते हुए कहा–"बरी खाने की मेरी इच्छा हो रही है! कल सुबह मुखिया के खेत से एक कुम्हाड़ा तोड़कर गाड़ी में ले आओ। एक कुम्हाड़े से मुखिया का कोई बड़ा नुक़सान न होगा।"

"अरी, तुम पागल हो गई हो? चोरी का काम मुझसे कराना चाहती हो? यह सब मुझसे न होगा! अभी जल्दी क्या पड़ी है? मुखिया साहब ने भी अब तक कुम्हाड़ा खाया नहीं है। जब वे कुम्हाड़े तुड़वायेंगे तब वे खुद दो कुम्हाड़े हमें भी दे देंगे।" मंगू ने समझाया।

झुनिया ने सिसकिया भरते हुए कहा– "मैंने तुम से सोना और चाँदी के गहने थोड़े ही माँगे हैं? जो इनकार करते हो! एक कुम्हाड़ा के वास्ते सारे बाग के कुम्हाड़ों के पकने तक इंतज़ार करना है! मुँह अंधेरे जाकर तुम एक कुम्हाड़ा तोड़ लाओ तो मुखिया थोड़े ही देखनेवाले हैं?"

मंगू ने झुनिया को अनेक प्रकार से समझाया, पर झुनिया ने हठ करके आखिर मंगू को मनवा लिया।

मंगू खाना खाकर सो गया। झुनिया ने अपनी पड़ोसिन को पुकार कर पूछा–

राधाकृष्ण शर्मा

"भाभी, यह बताओ, बरी बनाने के लिए कितनी दाल भिगोनी है?"

"अरी, जैसा कुम्हाड़ा होगा, उतनी ही दाल भिगोनी पड़ेगी। दिखाओ तो, कुम्हाड़ा कितना बड़ा है?" पड़ोसिन ने पूछा।

"कल सवेरे मेरे घरवाले मुखिया के खेत से लानेवाले हैं।" झुनिया के मुँह से बात निकल गई, फिर अपनी भूल पर पछताते हुए जल्दी जल्दी रसोई में लौट आई।

पड़ोसिन को असली बात मालूम हो गई। उससे रहा नहीं गया। उसी वक़्त वह अपना काम-धाम छोड़कर मुखिया के घर पहुँची और यह बात मुखिया की पत्नी के कान में डाल दी।

मुखिया की औरत भड़क उठी। वह अपने पति से बोली—"आज तक मंगू हमारा नामक खाकर हमारे ही पत्तल में छेद करता रहा है। मंगू को आज ही काम से हटा दो।" इन शब्दों के साथ उसने सारी कहानी सुनाई।

मुखिया सारी बातें सुन मुस्कुराकर बोला—"अरी इतनी सी छोटी बात के लिए मैं मंगू को नौकरी से हटा दूँ? बेचारा वह कई सालों से ईमानदारी के साथ हमारे घर काम करता आ रहा है!"

"तुम यह क्या कहते हो? चोर पर विश्वास कैसा? आज कुम्हाड़ा चुरायेगा

और कल इससे बड़ी चीज़! अब उसको रखने से कोई फ़ायदा नहीं, उसे काम से निकालना ही होगा।" मुखिया की पत्नी ने हठ किया।

मुखिया आगे कुछ न बोला। वह मौन रह गया। लेकिन सचाई का पता लगाने के ख़्याल से वह मुँह अंधेरे बगीचे की ओर चल पड़ा। बगीचे के बाहर उसकी गाड़ी तैयार खड़ी थी। मुखिया एक पेड़ की ओट में खड़ा हो गया। मंगू बगीचे से एक कुम्हाड़ा उठा लाया, गाड़ी में डालकर एक परदा इस तरह बाँध दिया जिससे किसी को कुम्हाड़ा दिखाई न दे, तब बगीचे का फाटक बंद

करने के लिए चला गया। उस वक़्त मौक़ा पाकर मुखिया झट से दौड़ आया और गाड़ी में पर्दे के पीछे बैठ गया।

मंगू खुशी-खुशी गाड़ी हांकते अपने घर पहुंचा। कुम्हाड़ा लेकर अपने घर पहुँचाने के ख्याल से उसने ज्यों ही परदा हटाया, त्यों ही मुखिया अंगड़ाई लेते हुए गाड़ी से उतर पड़ा और आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा–"अरे, मैं समझ रहा था कि तुम इस कुम्हाड़े को मेरे घर पहुंचा रहे हो? पर तुम्हारे घर क्यों लाये हो?"

मुखिया को देखते ही मंगू के प्राण सूख गये। अपनी चोरी के प्रकट होने पर वह लज्जित हुआ, डरते हुए हाथ जोड़कर बोला–"मालिक! मुझ से गलती हो गई! आप से कहे बिना कुम्हाड़ा तोड़ लाया हूं!"

"अरे, मैं आज तक तुम पर विश्वास करता रहा। तुम्हीं मुझे दगा देते हो?" मुखिया ने क्रोध का अभिनय करते हुए कहा। मंगू ने सारी कहानी मुखिया को सुनाकर मिन्नत की–"मालिक! यह काम मैंने अपने मन से नहीं किया है! मैंने अपनी पत्नी के हठ से परेशान हो यह काम किया है! मुझे माफ़ कर दीजिए!"

"तब तो तुम आज से काम पर हाज़िर मत होओ! मेरी पत्नी तुम को नौकरी से हटाने के लिए हठ कर रही है! मेरी पत्नी की बात को मानना मेरे लिए भी तो जरूरी है।"

ये बातें सुन मंगू मुखिया के पैरों पर गिर पड़ा और गिड़गिड़ाने लगा–"मालिक! मेरे इस एक अपराध को क्षमा कर दीजिए! आइंदा में ऐसी गलती नहीं करूँगा।"

"सुनो मंगू! जो भी काम करो, भला-बुरा खुद सोच-समझकर करो! औरत की बात या दूसरों की बात मानकर कहीं ऐसे काम किये जाते हैं? आज से तुम ऐसी गलती न करो! वह कुम्हाड़ा तुम अपनी औरत के हाथ देकर मुझे गाड़ी में अपने घर तक पहुंचा दो।" मुखिया ने समझाया।

नाग देवता

एक गरीब ब्राह्मण अपने खेत में काम कर रहा था, तभी उसने एक बांबी से एक नाग को बाहर निकलते देख लिया। उसने नाग देवता की प्रार्थना की, रोज संध्या को घर लौटते वक्त वह बांबी के पास एक ढक्कन में दूध भरकर चला जाता था। दूसरे दिन सवेरे उस ढक्कन में उसे सोने की एक गिन्नी पड़ी दिखाई देती थी।

एक बार ब्राह्मण किसी काम से बाहर गया। उसने ढक्कन में दूध रखने का काम अपने बेटे को सौंप दिया। लड़के ने सोचा कि बांबी में जो कुछ सोना है, उसे एक ही दफ़ा में हड़प लेना है। लोभ में आकर ज्यों ही नाग दूध पीने बांबी से बाहर आया, त्यों ही उसने उस पर लाठी चलाई। नाग ने उस लड़के को डस दिया, लड़का मर गया।

दो दिन बाद ब्राह्मण अपने गाँव लौट आया, अपने बेटे की मौत पर वह बड़ा दुखी हुआ, फिर दूध लेकर वह बांबी के पास पहुंचा और नाग देवता की प्रार्थना की।

नाग ने बांबी में से सर निकालकर कहा—"तुम भी अपने पुत्र की भांति लोभी हो! उसने मुझ पर जो लाठी चलाई, उसे मैं आज तक भूल नहीं पाया, लेकिन तुम अपने पुत्र की मौत को इतनी जल्दी कैसे भूल सके? तुम आइंदा मेरी मैत्री न करो।"

चोर चोर मौसेरे भाई

एक दिन रात को एक लुटेरा एक सुनार के घर में चोरी करके चहार दीवारी फांदकर भगने लगा, तभी आनंद नामक एक पहरेदार ने उसे देखा। आनंद ने चोर का पीछा किया। चोर भाग गया और आखिर एक झोंपड़ी में जा घुसा।

वह झोंपड़ी अघोरक नामक एक मांत्रिक की थी। लोगों का यह विश्वास था कि मांत्रिक अनेक प्रकार की अद्भुत शक्तियाँ रखता है। उसके नाम से ही सभी लोग डरते थे।

आनंद ने झोंपड़ी का दर्वाजा ढकेलकर भीतर प्रवेश किया। मांत्रिक के हाथों में पड़कर चटपटानेवाला चोर उसकी आँखों में पड़ा। आनंद ने मांत्रिक की मदद से चोर को एक खूंटे से बांध दिया। चोर के हाथ की पोटली खींची, उसे खोलकर देखा तो उसके आश्चर्य की सीमा न थी। उस पोटली में चोरी करने के लिए आवश्यक सामग्री को छोड़ चोरी का माल कुछ न था। लेकिन आनंद ने चोर को सुनार के घर की दीवार को फांदकर भागते खुद अपनी आँखों से देखा था, ऐसी हालत में चोरी का माल कहाँ गया?

"अरे दुष्ट! बताओ, तुमने जो चोरी की, वह माल कहाँ? नहीं बताओगे तो तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ डालूँगा।" आनंद ने चोर को धमकी दी।

चोर ने काँपते हुए कहा–"आप यक़ीन मानिये! मैं दीवार फाँदकर घर के भीतर घुसनेवाला था, तभी आप को देख चोरी किये बिना भाग आया। मैंने चोरी नहीं की!"

आनंद ने समझा कि वह झूठ बोल रहा है, इसलिए उसे पीटने को हुआ। तब मांत्रिक ने आनंद को रोककर कहा–

रमाकांत गोयल

"भाई, तुम क्यों नाहक़ श्रम उठाते हो? अगर वह निर्दोष है, तो उसे पीटने का पाप तुम्हें लगेगा। इसने चोरी की है या नहीं इस बात को मैं अपनी मंत्र-शक्ति के बल साबित करूँगा।" यों कहकर उसने एक पेटी खोल दी, उसमें से एक खोपड़ी और कुछ हड्डियां निकालीं। इसके बाद उसने रंगोली की, उसके बीच खोपड़ी रखी और चोर को एक कोने में बिठाया।

"सुनो, यदि इसने चोरी की हो तो यह खोपड़ी इस जगह से न हिलेगी। चोरी न की हो, ऐसी हालत में यह खोपड़ी चोर के पास जाकर पुनः अपनी जगह वापस आ जाएगी।" इन शब्दों के साथ मांत्रिक ने हड्डी को खोपड़ी के चारों तरफ़ घुमाकर कोई मंत्र पढ़े। खोपड़ी विचित्र ढंग से लुढ़कते जाकर चोर के निकट पहुँची, पुनः रंगोली के बीच आ गई।

"देखते हो न? इसने चोरी नहीं की है! इसे छोड़ दो, बेचारा अपने रास्ते आप चला जाएगा।" मांत्रिक ने समझाया।

आनंद तब भी मांत्रिक की बातों पर विश्वास न कर पाया, बोला-"इसकी बाबत मैं देख लूंगा।" यों कहकर चोर को अपने साथ ले गया।

दूसरे दिन आनंद चोर को साथ ले दरबार में पहुँचा और फ़रियाद की कि पिछली रात को इस चोर ने अमुक सुनार के घर चोरी की है।

राजा ने सुनार को बुलवाकर पूछा– "क्या कल रात को तुम्हारे घर कोई चीज़ चोरी गई है?"

"नहीं महाराज! मेरे घर में कोई चीज़ चोरी नहीं गई है।" सुनार ने जवाब दिया।

आनंद को आश्चर्य हुआ। उसने सोचा कि शायद चोर के द्वारा चोरी करने के पहले ही वह उसके हाथ पड़ गया हो!

इतने में दो सिपाही अघोरक को बन्दी बनाकर दरबार में ले आये। उन सिपाहियों ने एक गठरी राजा के सामने रखकर निवेदन किया–"महाराज! यह दुष्ट अपनी कुछ क्षुद्र शक्तियों के द्वारा जनता को धोखा देकर, डराकर धन कमा रहा है। हम लोगों ने पहले से ही इस पर कड़ी निगरानी रखी थी। यह क़ीमती गहने बेच रहा था, तब हम इसे पकड़कर ले आये हैं।"

राजा ने गठरी खोलकर देखा और कहा–"ये तो हमारी युवरानी के आभूषण हैं। एक महीने पूर्व किसी ने इन आभूषणों की चोरी की है। बताओ, ये गहने तुम्हें कैसे मिले?"

उन गहनों को देख आनंद का चेहरा पीला पड़ गया।

अघोरक आपाद मस्तक काँपते हुए बोला–"महाराज! मैंने इस चोर के साथ सहयोग देकर गहनों की इस गठरी को छिपा रखा था।" इसके बाद चोर ने मान लिया कि उसने ये गहने सुनार के घर से चुरा लिये हैं।

इस पर सुनार ने डरते हुए कहा– "महाराज! ये गहने मेरे घर ज़रूर छिपाये गये थे, पर मैंने इन गहनों की चोरी नहीं की है। आनंद ने ये गहने लाकर बेचने के लिए मेरे हाथ दिये थे।"

अब पता चल गया कि आनंद, चोर, मांत्रिक और सुनार चारों चोर हैं। राजा ने उन चारों को कारागार का दण्ड सुनाया।

विभीषण के संबंध में हनुमान ने जो सलाह दी, उसे सुनने के बाद रामचन्द्रजी ने अपना विचार यों प्रकट किया—"विभीषण भले ही दुष्ट क्यों न हो, पर शरण में आये हुए व्यक्ति का तिरस्कार करना अधर्म है।"

"चाहे वह दुष्ट स्वभाव का हो या उत्तम स्वभाव का, उसके साथ हमारा काम ही क्या है?" सुग्रीव ने सवाल किया। उसका विचार था कि कठिनाई के वक्त जो व्यक्ति अपने भाई को छोड़कर चला आता है, वह कृतघ्न है, ऐसा व्यक्ति किसी को भी त्याग सकता है।

रामचन्द्रजी ने सुग्रीव के विचार का खंडन करते हुए लक्ष्मण को बताया—"ज्ञातियों के बीच वैर होता है। अपने बड़े भाई से डरकर विभीषण हमारे पास आया है। उसे अपने भाई का राज्य चाहिए। इसलिए वह रामचन्द्र तथा वानरों को त्याग नहीं सकता।"

"हमारा वध करने के लिए ही रावण ने इसे भेज दिया हो, क्या पता! इसे शरण देना खतरे से खाली नहीं है।" लक्ष्मण ने सुझाया। सुग्रीव ने अपनी शंका प्रकट की कि रावण के भाई पर विश्वास कैसे करें? परंतु रामचन्द्रजी ने अपना विचार स्पष्ट किया कि शरण में आये हुए व्यक्ति को आश्रय देना हमारा कर्तव्य है। उसका तिरस्कार करना महान पाप है! चाहे वह विभीषण के रूप में

२०. शुक का दूत कार्य

आया हुआ रावण ही क्यों न हो, मैं उसको आश्रय दूँगा। इन शब्दों के साथ उसे बुला लाने का सुग्रीव को आदेश दिया।

सुग्रीव विभीषण को तत्काल बुला ले आया। विभीषण ने अपने साथ आये चार राक्षसों के साथ रामचन्द्रजी के चरणों में प्रणाम किया। तब कहा–"मैं रावण का छोटा भाई हूँ। मेरे भाई ने मेरा अपमान किया है। इसलिए मैं आपकी शरण में आया हुआ हूँ। साथ ही लंका के मेरे परिवार तथा संपत्ति को छोड़कर चला आया हूँ। अब मेरे राज्य, प्राण तथा सुख भी आपके अधीन में हैं।"

विभीषण की ये बातें रामचन्द्रजी के कानों में अमृत घोल गईं। रामचन्द्रजी ने विभीषण को आदेश दिया कि वह राक्षसों की शक्ति का परिचय दे।

विभीषण ने यों बताया–"ब्रह्मा के वरदान के कारण रावण गंधर्व, नाग, राक्षस तथा अन्य भूतों के हाथों में पराजित न होंगे। रावण का छोटा भाई तथा मेरे बड़े भाई कुंभकर्ण हैं जो पराक्रम में इंद्र से कम नहीं हैं। रावण का पुत्र इंद्रजित अपनी उंगलियों तथा शरीर पर अभेद्य कवच धारण कर युद्ध करते हुए अदृश्य हो सकता है। इसके वास्ते वह युद्ध के बीच अग्नि की पूजा करता है। रावण के सेनापति दिक्पालों के समान अत्यंत पराक्रमी हैं। वांछित रूप को धारण कर सकनेवाले राक्षस लंका में

असंख्य हैं। ऐसे राक्षसों की सहायता से रावण ने दिक्पालों पर विजय प्राप्त की है।"

ये बातें सुनकर रामचन्द्रजी ने विभीषण को आश्वासन दिया–"ऐसे शक्तिशाली रावण तथा उनके राक्षस वीरों का वध करके मैं तुमको लंका का राजा नियुक्त करूँगा। यही मेरी प्रतिज्ञा है। रावण का उसके बंधु-बांधवों के साथ वध किये बिना मैं अयोध्या को नहीं लौटूँगा। यह बात मैं अपने छोटे भाइयों की शपथ लेकर कह रहा हूँ।"

इस पर विभीषण ने रामचन्द्रजी के सामने साष्टांग प्रणाम करके वचन दिया–"मैं भी यथाशक्ति राक्षसों का वध करने तथा लंका पर विजय प्राप्त करने में आपकी सहायता करूँगा।"

रामचन्द्रजी ने प्रसन्न होकर विभीषण के साथ आलिंगन किया और लक्ष्मण से कहा–"लक्ष्मण! समुद्र का जल लाकर विभीषण का राक्षस-राजा के रूप में अभिषेक करो।"

वानरों के बीच राक्षस राजा के रूप में विभीषण का अभिषेक किया गया। वानरों ने सिंहनाद करके रामचन्द्रजी की प्रस्तुति की। उसके बाद सुग्रीव तथा हनुमान ने एकांत में विभीषण से पूछा–"हम लोग इन वानरों के साथ इस महा समुद्र को कैसे पार करें?"

विभीषण ने सलाह दी–"रामचन्द्रजी को समुद्र की शरण में जाना होगा! उनके

पूर्वज सगर ने समुद्र के प्रति बड़ा उपकार किया था, इसलिए समुद्र रामचन्द्रजी के इस कार्य में अवश्य सहायता करेगा।"

सुग्रीव ने रामचन्द्रजी के पास लौटकर विभीषण की बातें कह सुनाईं। रामचन्द्र ने भी विभीषण की सलाह से संतुष्ट होकर सुग्रीव तथा लक्ष्मण से इस संबंध में उनके सुझाव माँगा। उन दोनों ने भी विभीषण के विचार का समर्थन किया।

इस पर रामचन्द्रजी समुद्र के तट पर दाभ बिछाकर उन पर लेट गये।

इसी समय रावण का गुप्तचर शार्दूल नामक राक्षस वहाँ पर पहुँचा। वानर-सेना का परिशीलन करके लंका को लौटकर रावण से यों बोला—"सम्राट! वानर और भल्लूकों की सेना समुद्र की भाँति दूर तक फैली हुई है। रामचन्द्रजी, लक्ष्मण तथा पराक्रमी योद्धा सीताजी को ले जाने के लिए तैयार बैठे हैं। मैंने वैसे विहांगवलोकन किया है, आप पूरा समाचार लाने के लिए किसी और दूत को भिजवा दीजिए।"

इस पर रावण ने शुक नामक राक्षस को बुलाकर उसे आदेश दिया कि वह सुग्रीव के पास पहुँच कर अपना संदेशा यों सुना दे— "हे सुग्रीव! मैं रामचन्द्रजी की पत्नी का अपहरण करके लाया हूँ। इस घटना के साथ तुम्हारा कोई वास्ता नहीं है। तुम तो वानरों के राजा हो, साथ ही तुम बुद्धिमान हो! इसलिए सोच-समझकर तुम किष्किंधा को लौट जाओ। यह बात सपने में भी मत सोचो कि जिस लंका नगर में देवता तथा गंधर्व तक प्रवेश नहीं कर सकते, उसमें वानर प्रवेश कर सकते हैं।"

शुक रावण का संदेशा लेकर पक्षी का रूप धारण कर समुद्र के उत्तरी तट पर पहुँचा, जहाँ वानर-सेनाएँ डेरा डाले हुए थीं। उसने सुग्रीव के आगे आसमान में ही रहकर रावण का संदेशा सुनाया।

तब शुक का वध करने के लिए थोड़े वानर आसमान में उड़े और उसे पकड़ कर
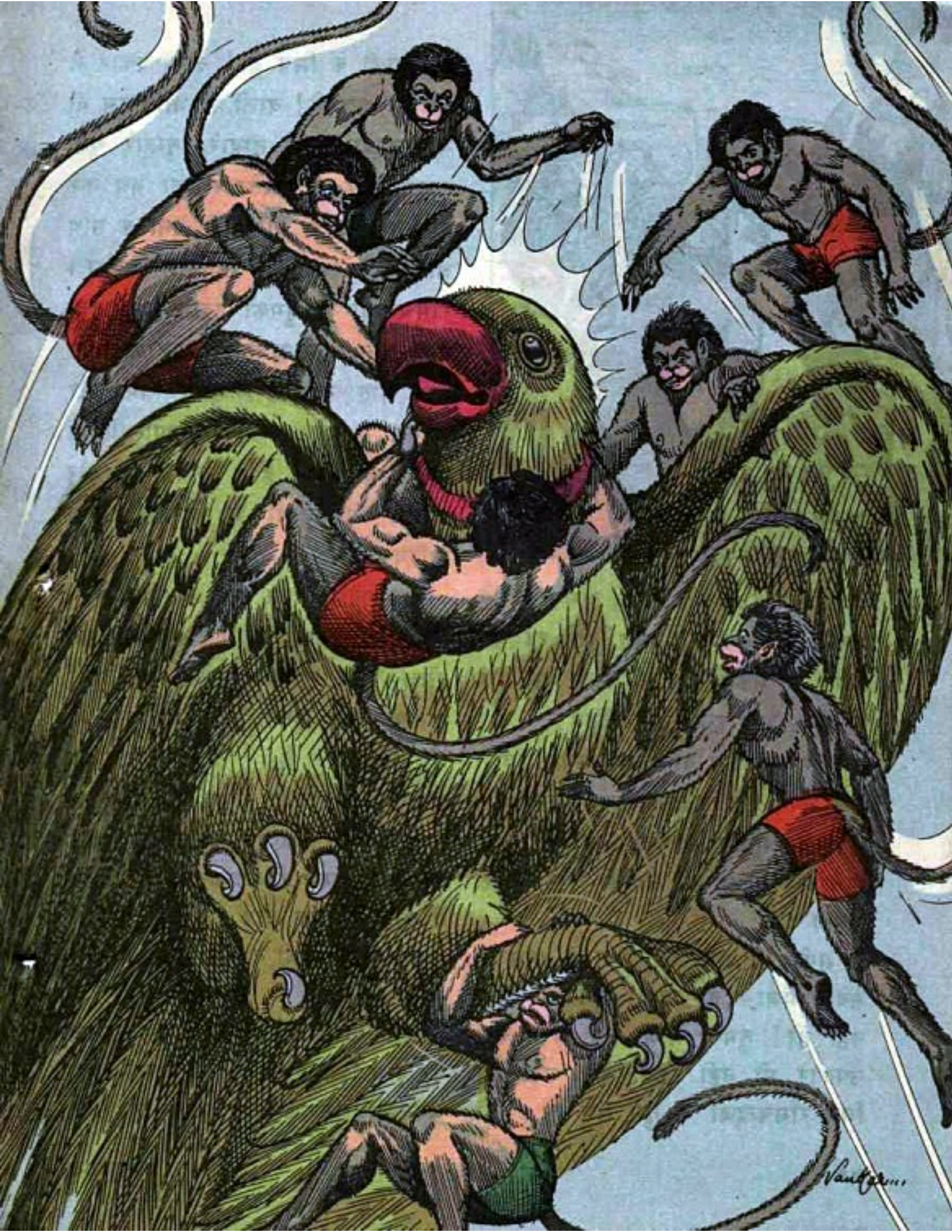
शत्रु वाली के मित्र हो! दोनों प्रकार से तुम मेरे शत्रु हो! वाली की भांति तुम भी मर जाओगे! मैं तुम्हारे, तुम्हारे पुत्र, तुम्हारे बंधु व रिश्तेदारों का वध कर डालूंगा। शीघ्र ही भारी सेना के साथ आकर मैं लंका का सर्वनाश करूँगा। रामचन्द्रजी से तुमको इंद्रादि भी बचा नहीं सकते। सीताजी का अपहरण करना बड़ी बात नहीं है। तुमने राम और लक्ष्मण मे डरकर उनकी अनुपस्थिति में यह कार्य किया है। उन्हीं राम और लक्ष्मण के हाथों से तुम्हारी मृत्यु निश्चित है!"

जमीन पर दे मारा। उसने रामचन्द्रजी से कहा–"रामचन्द्रजी! क्या दूत का वध किया जा सकता है? ये वानर मुझे मार रहे हैं। आप इन्हें रोक दीजिए!"

रामचन्द्रजी ने वानरों को मना किया। शुक अपने पंख फड़फड़ा कर आसमान में उड़ा, तब सुग्रीव से पूछा–"वानर राजा! मैं राक्षस राजा को आपकी ओर से क्या जवाब दूं?"

सुग्रीव ने शुक से रावण के पास यों संदेशा भेजा–"हे रावण! तुम मेरे दोस्त नहीं हो! तुमने आज तक मेरा कोई उपकार भी नहीं किया है। उल्टे मेरे मित्र रामचन्द्रजी के तुम शत्रु हो। मेरे

यह संदेशा लेकर शुक जानेवाला था। तब अंगद उसको रोककर सुग्रीव से यों बोला–"यह रावण का दूत नहीं, कोई गुप्तचर जैसा लगता है! हमारी सेनाओं की टोह ले रहा है।" तत्काल ही सुग्रीव ने वानरों को आदेश दिया कि वे शुक को बन्दी बनावे। शुक पुनः वानरों के हाथों में आ गया, उसने चिल्लाकर कहा–"ओह! ये लोग मेरे पंख तोड़ रहे हैं।" ये बातें सुनकर रामचन्द्रजी ने उसे वानरों के हाथों से मुक्त किया।

इसके बाद रामचन्द्रजी ने समुद्र के तट पर दाभ बिछाकर समुद्र को प्रणाम किया, अपने हाथ सिर के नीचे रखकर लेट गया।

उनका मुख समुद्र की ओर था। समुद्र का ध्यान करते रामचन्द्रजी ने तीन रात बिताई। मगर समुद्र प्रत्यक्ष नहीं हुआ।

रामचन्द्रजी का क्रोध उमड़ पड़ा। उनकी आँखें लाल हो उठीं। वे लक्ष्मण से बोले-"यह समुद्र मेरे सामने क्यों प्रकट नहीं होता? इसे इतना घमण्ड क्यों है? मैं अपने बाणों के द्वारा समुद्र के सभी प्राणों का वध कर उसे धर्रा दूंगा। मेरे धनुष और बाण लेते आओ।"

लक्ष्मण रामचन्द्रजी के धनुष और बाण ले आया। रामचन्द्रजी ने धनुष पर बाण चढ़ाकर वज्रायुध जैसे बाणों का समुद्र पर प्रयोग किया। बाण ज्यों ही समुद्र के जल में घुस गये, त्यों ही समुद्र में से तरंग और धुआ उठा।

रामचन्द्रजी और बाण छोड़ने जा रहे थे, तब लक्ष्मण ने यह सोचकर उन्हें रोका कि रामचन्द्रजी के बाणों से तीनों लोक जल जायेंगे और उनके धनुष को पकड़कर बोला-"भैया! बाणों का प्रहार न कीजिए! कृपया शांत हो जाइए।"

लेकिन तब भी समुद्र उन्हें दिखाई नहीं दिया। इस पर रामचन्द्रजी ने समुद्र से कहा-"हे समुद्र! मैं अपने बाणों के द्वारा तुम्हें सुखाकर मरुभूमि बना दूंगा। मेरे बल एवं पराक्रम की तुम कल्पना तक नहीं कर सकते। तुम्हारे अज्ञान का कारण यह होगा कि तुमने अपने अन्दर रहनेवाले दानवों के साथ मैत्री की होगी!"

यों कहकर रामचन्द्रजी ने अपने धनुष पर ब्रह्मास्त्र चढ़ाकर कान तक प्रत्यंचा को खींचा और उसे छोड़ने को तैयार हो गये, तभी पृथ्वी और आकाश गूंज उठे। पहाड़ थर्राने लगे। एक ही साथ ऐसा प्रतीत हुआ, मानो सारे संसार में अंधकार छा गया हो! आसमान में प्रचण्ड वायु बहने लगी। प्राणी आर्तनाद कर उठे। समुद्र एक योजन की दूरी तक पीछे हट गया। इसे देख रामचन्द्रजी ने अपने अस्त्र को वापस ले लिया। उसी वक्त समुद्र के

मध्य में समुद्र दिखाई दिया। उसका शरीर वैडूर्य की कांति के समान था। उसकी देह पर दिव्य पुष्पों की मालाएँ पड़ी थीं। सारे शरीर पर आभूषण अलंकृत थे। साथ ही वह गंगा, सिंधु इत्यादि नदियों के साथ प्रकट हुआ।

इसके उपरांत समुद्र ने राम के निकट पहुँचकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया और बोला–"हे रामचन्द्र! गहराई और गंभीरता मेरे सहज गुण हैं। अपने जल को स्तम्भित करना मेरे वश की बात नहीं है। मैं केवल यही कर सकता हूँ कि जब तक आपकी सेना मुझे पार न करेगी तब तक समुद्री प्राणियों के द्वारा आप लोगों की कोई हानि न हो, इतना मात्र मैं कर सकता हूँ।"

"तब तो मैंने धनुष पर जो बाण चढ़ाया, इसका प्रयोग कहाँ पर करूँ?" रामचन्द्रजी ने समुद्र से पूछा।

"उत्तरी दिशा में एक प्रदेश है। वहाँ पर आभार नामक पापी हैं जो सदा पाप पूर्ण कार्य किये जा रहे हैं। आप अपने बाण का उन पर प्रयोग कीजिए।" समुद्र ने रामचन्द्रजी से कहा।

रामचन्द्रजी ने समुद्र के कहे अनुसार अपने बाण का प्रहार किया, बाण जहाँ पर गिरा, वहाँ का प्रदेश सर्वनाश हो गया। वहाँ से पाताल का जल ऊपर निकल आया। उसका नाम व्रण कूप पड़ा।

इसके उपरांत समुद्र ने रामचन्द्रजी से कहा–"नील नामक वानर विश्वकर्म का पुत्र है। वह समुद्र पर सेतु बाँध देगा। मैं इस बात का प्रबंध करूँगा कि वह सेतु पानी में डूब न जाय!" यों कहकर समुद्र अंतर्धान हो गया।

नील ने रामचन्द्रजी को समझाया–"भगवान! मैं विश्वकर्म का पुत्र हूँ। मैंने विश्वकर्म से वरदान भी प्राप्त किये हैं; मैं सेतु का निर्माण कर सकता हूँ। चाहे तो अभी अभी वनरों के द्वारा सेतु के निर्माण का प्रबंध किया जा सकता है!"

ऐकमत्य मुपागम्य,
शास्त्र दृष्टेन चाक्षुषा,
मंत्रिणो यत्र निरता:
त माहु मंत्र मुत्तमम् ॥ १ ॥

[मंत्री सब एक मत हो शास्त्रीय दृष्टिकोण से विचार करके उत्साह पूर्वक जो मंत्रणा करते हैं, वही उत्तम है ।]

बह्यवोपि मतयो भूत्वा,
मंत्रिणा मर्थं निर्णये;
पुन र्यत्र्यैकताम प्राप्ता:
स मंत्रो मध्यम: श्रुत: ॥ २ ॥

[मंत्रियों के बीच चाहे अनेक प्रकार के मतभेद क्यों न हो, मंत्रणा करते समय सब एक हो जो मंत्रणा करते हैं, वह मध्यम प्रकार की मंत्रणा कहलाती है ।]

अन्योन्यम् मति मार-याय,
यत्र संप्रति भाष्यते,
नचैक मत्ये श्रेयोस्ति
मंत्र स्सोधम् उच्यते ॥ ६ ॥

[मंत्रियों के बीच मतभेद के होने के कारण जहाँ उनमें एकता संभव न होती हो ऐसी मंत्रणा को अधम कहा जा सकता है ।]

Photo by K. P. A. Swamy
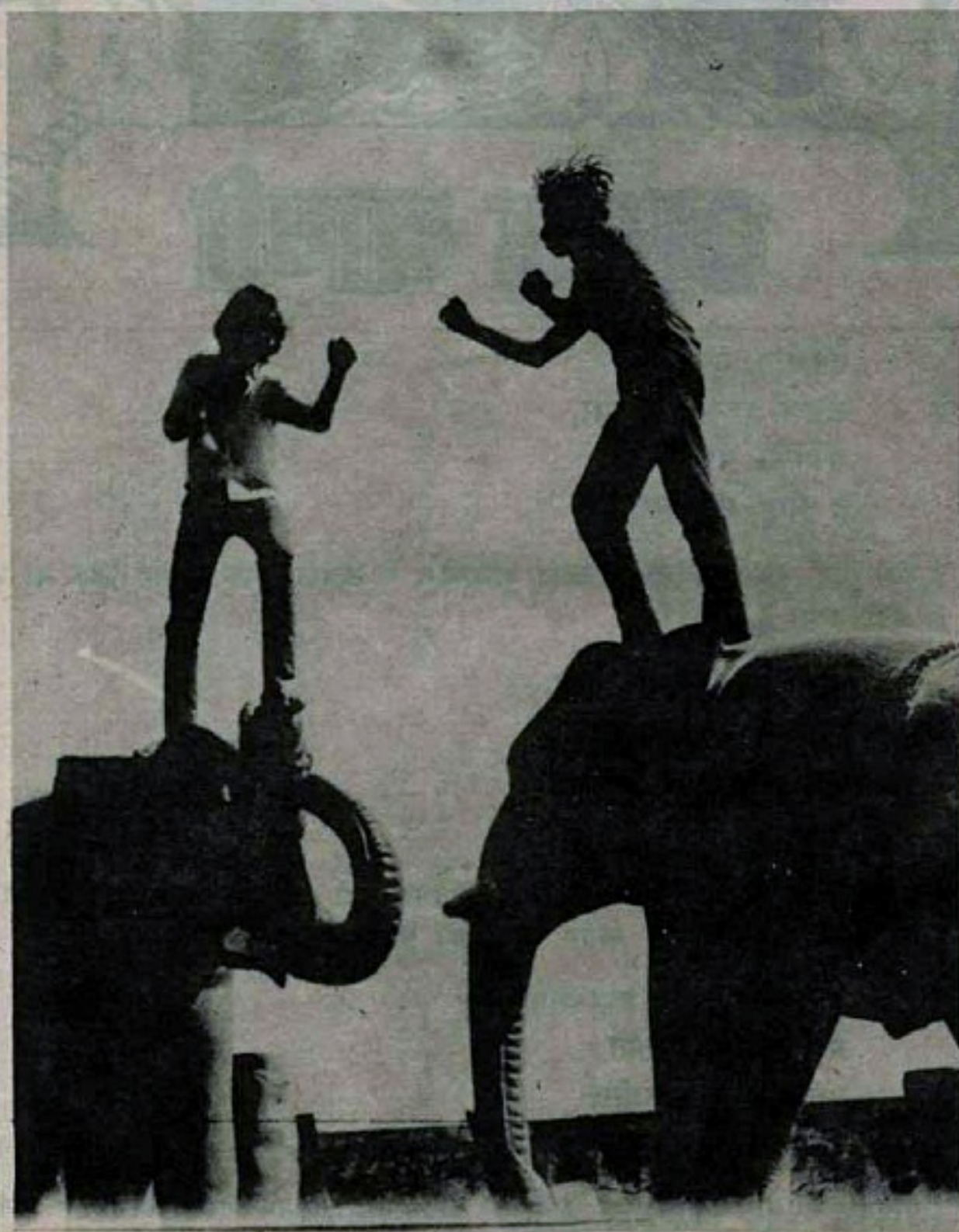
पुरस्कृत परिचयोक्ति

इन्सान से इन्सान लड़ता है,

प्रेषिका :
कु. मुंजूरी वसंतराव

Photo by Mohan D. Desai
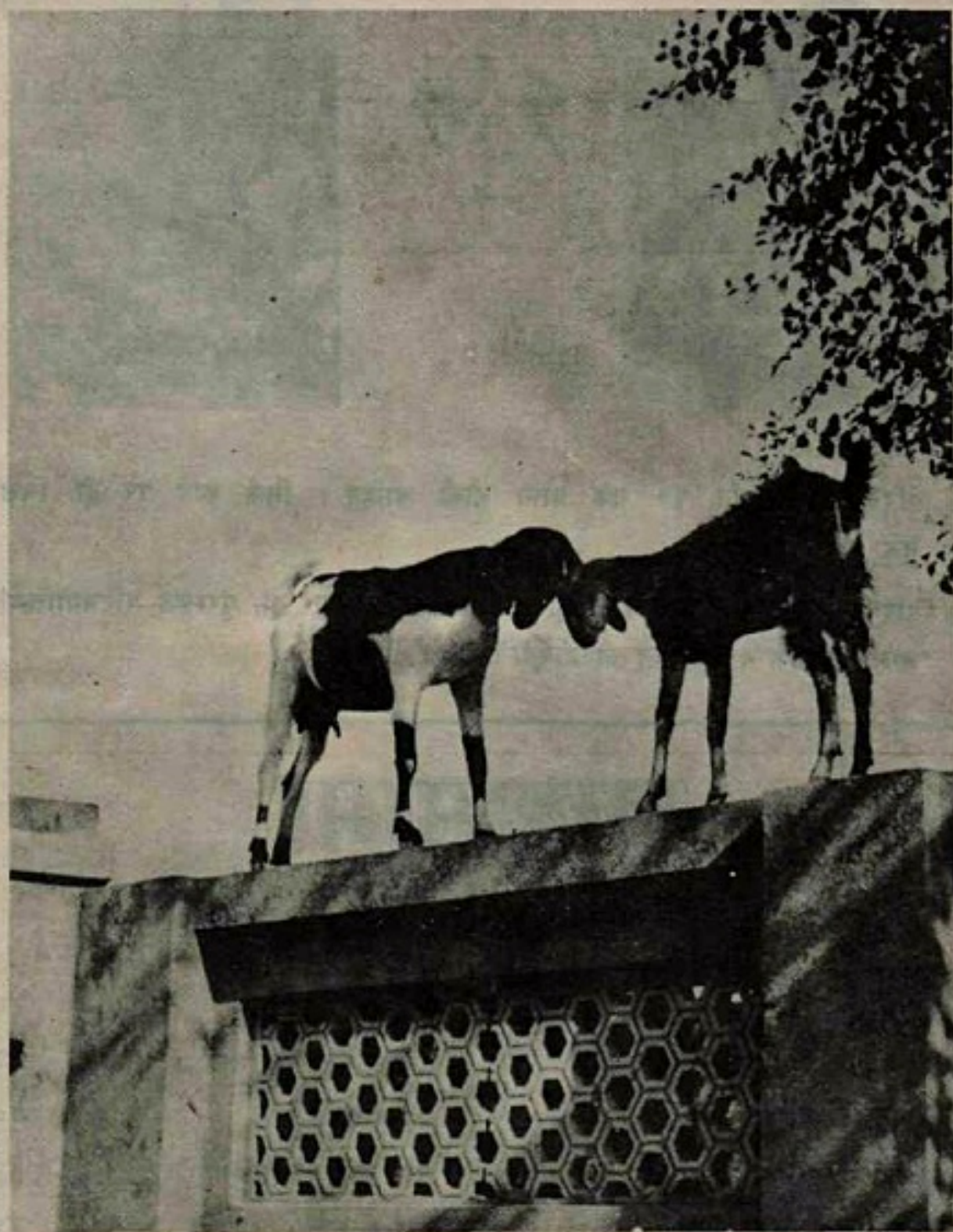
कोटपल्लिवार,
चन्द्रपुर (महाराष्ट्र)

तो जानवरों को जोश आता है ।

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ जून १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अगस्त के अंक में प्रकाशित की जायेंगी !

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Ltd., and Pubilshed by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras - 600 026: Controlling Editor: NAGI REDDI

मैसूर सॅन्डल सोप
महान भारतीय परम्परा स्पर्धा
रंग भरने की स्पर्धा
१६ वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए
(जो ३१ मई १९६० के बाद जन्मे हों)
पूर्ण विवरण के लिए किसी भी
प्रमुख स्टोर से प्रवेश पत्र प्राप्त कीजिये
या इस पते पर लिखिए :
मैसूर सेल्स इंटरनेशनल लि. (सोप्स डिवीजन)
३६ कनिंघम रोड, बंगलौर ५६० ०५२
२५,००० रुपये से भी ज़्यादा के शानदार पुरस्कार जीतिए
विजेताओं के परिवारों के लिए ३० बोनस पुरस्कार
MCA/MSIL/SS/54 hin
जल्दी कीजिये !
आख़िरी तारीख़ अब १५ जून १९७६ तक बढ़ा दी गयी है।
GOVT. SOAP FACTORY BANGALORE
मैसूर सॅन्डल
महान भारतीय परम्परा के अनुरूप स्नान का एक शाही साबुन
गवर्नमेंट सोप फ़ैक्टरी, बंगलौर का एक उत्कृष्ट उत्पादन
बिक्री व्यवस्थापक मैसूर सेल्स इंटरनेशनल लिमिटेड, बंगलौर

टिनोपाल* का नया नाम

रानीपाल+

वही चीज़,वही काम,लेकिन अब नया नाम

सर्वोत्तम सफ़ेदी के लिए रानीपाल+

Suhrid Geigy
LIMITED

+सुहृद गायगी लि. का ट्रेडमार्क. * पहले सीबा-गायगी लि. से प्राप्त लाइसेन्स के अधीन बेचा जाता था.

Shilpi SGT.6A/76 hin

मित्र-संप्राप्ति